RNI : UPHIN/2009/30450 ISSN : 2319-2178 (P) ISSN : 2582-6603 (O)

पीयर रिव्यूड जर्नल

मधुराक्षर

सामाजिक, सांस्कृतिक व साहित्यिक पुनर्निर्माण का उपक्रम

मई, 2023

वर्ष : 15, अंक : 02, पूर्णांक : 38

संपादक

डॉ. बृजेंद्र अग्निहोत्री

RNI : UPHIN/2009/30450 ISSN : 2319-2178 (P) ISSN : 2582-6603 (O)

संरक्षक परिषद
श्रीमती चित्रा मुद्गल
प्रो. गिरीश्वर मिश्र
प्रो. अशोक सिंह
प्रो. हितेंद्र मिश्र
डॉ. बालकृष्ण पाण्डेय
डॉ. अश्विनीकुमार शुक्ल

संपादक परिषद
डॉ. बृजेंद्र अग्निहोत्री (संपादक)
श्री पंकज पाण्डेय (उप-संपादक)
श्रीमती शालिनी सिंह (उप-संपादक)
डॉ. चुकी भूटिया (उप-संपादक)
डॉ. ऋचा द्विवेदी (उप-संपादक)
डॉ. आरती वर्मा (उप-संपादक)

परामर्श-विशेषज्ञ परिषद
डॉ. दमयंती सैनी
डॉ. दीपक त्रिपाठी
श्री मनस्वी तिवारी
श्री राम सुभाष
श्री जयकेश पाण्डेय
श्री महेशचंद्र त्रिपाठी
डॉ. शैलेष गुप्त 'वीर'
श्री मृत्यंजय पाण्डेय
श्री जयेन्द्र वर्मा

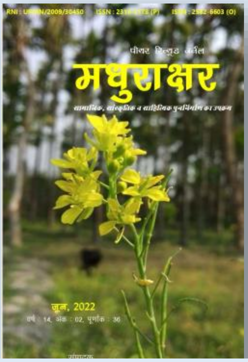

आवरण : **सबनम भुजेल**

संपादक
डॉ. बृजेंद्र अग्निहोत्री

मधुराक्षर

सामाजिक, सांस्कृतिक व साहित्यिक पुनर्निर्माण का उपक्रम

मई, 2023
वर्ष : 15, अंक : 02, पूर्णांक : 38

पूर्णतः अव्यावसायिक एवं अवैतनिक प्रकाशन
पूर्णतः अव्यावसायिक एवं अवैतनिक प्रकाशन

ई-संस्करण

सहयोग

एक प्रति : 30 रुपये

व्यक्तियों के लिए

वार्षिक : 110 रुपये
त्रैवार्षिक : 300 रुपये
आजीवन : 2500 रुपये

संस्थाओं के लिए

वार्षिक : 150 रुपये
त्रैवार्षिक : 450 रुपये
आजीवन : 5000 रुपये

विदेशों के लिए (हवाई डाक)

एक अंक : 6 $
वार्षिक : 24 $
आजीवन : 300 $

सदस्यता शुल्क का भुगतान भारतीय स्टेट बैंक की किसी शाखा में खाता क्रमांक- **10946443013** (IFS Code- SBIN0000076, MICR Code - 212002002) या 'मधुराक्षर' के बैंक खाता क्रमांक **31807644508** (IFS Code- SBIN0005396, MICR Code- 212002004) में करें।

मधुराक्षर में प्रकाशित सभी लेखों पर संपादक की सहमति हो, यह आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री की सत्यता व मौलिकता हेतु लेखक स्वयं जिम्मेदार है। पत्रिका में प्रकाशित किसी भी लेख पर आपत्ति होने पर उसके विरुद्ध कार्यवाही केवल फतेहपुर न्यायालय में होगी।

मुद्रक, प्रकाशक एवं स्वामी
बृजेन्द्र अग्निहोत्री द्वारा स्विफ्ट प्रिन्टर्स, 259, कटरा अब्दुलगनी, चौक, फतेहपुर से मुद्रित कराकर जिला कारागार, मनोहर नगर फतेहपुर (उ.प्र.) 212601 से प्रकाशित।

सामाजिक, सांस्कृतिक व साहित्यिक पुनर्निर्माण की पत्रिका

मधुराक्षर

नवंबर, 2023

संपादक
डॉ. बृजेंद्र अग्निहोत्री

संपादकीय कार्यालय
जिला कारागार के पीछे, मनोहर नगर, फतेहपुर (उ.प्र.) 212 601

E-Mail :
madhurakshar@gmail.com

Visit us :
www.madhurakshar.com
www.madhurakshar.blogspot.com

www.facebook.com/agniakshar

चलित वार्ता
+91 9918695656

एक नज़र में...

संपादकीय
अपनी बात **बृजेंद्र अग्निहोत्री** 05

कथा–साहित्य
जंगल के दावेदार **श्यामल बिहारी महतो** 06
स्वाभिमानिनी **जयश्री बिरमी** 20
बेटी की कमाई **सविता शर्मा 'अक्षजा'** 28
स्मृति–ध्वंस **पीयूष कुमार** 34

कथेतर गद्य
कोशल से छत्तीसगढ़ की यात्रा
(नामकरण के ऐतिहासिक संदर्भ में) **मनीष कुमार कुर्रे** 48
इक्कीसवीं सदी की स्त्री
भारतीयता की पोषक या विनाशक ? **डॉ. आशा मिश्रा 'मुक्ता'** 60

कृति–चर्चा
कल्याणी (कथा संग्रह), : मुक्तिनाथ झा
सुरेंद्र अग्निहोत्री 68
मेघलेखा (काव्य) : कुमार विक्रमादित्य
विजय कुमार तिवारी 71
काले मेघा (कहानी संग्रह) : डॉ. श्री प्रकाश मिश्र,
डॉ. राजेश तिवारी 79
मन बोहेमियन (कहानी संग्रह) : रामनगीना मौर्य
डॉ. वेद प्रकाश अमिताभ 83
केसरिया बालम (उपन्यास) : डॉ. हंसा दीप
विजय कुमार तिवारी 86
हमारा घर जल रहा है
डॉ. प्रशांत द्विवेदी 100

काव्य सुरसरि
डिंपल राठौर 85, 99
एल. सी. कुमार 105
संजय कुमार सिंह 107
नवीन माथुर पंचोली 111
समीर द्विवेदी 'नितांत' 113
मनोज शाह 'मानस' 114
विज्ञान व्रत 115

संपादकीय

अपनी बात

एक ईश्वर का बहुत बड़ा भक्त था। प्रातः सर्वप्रथम ईश्वर की पूजा अर्चना करना; किसी भी कार्य को आरंभ करने के पूर्व ईश्वर का स्मरण करना, उसकी नित्यक्रिया में सम्मिलित थे। काफी समय बीत जाने के बाद एक दिन अकस्मात ईश्वर उसके सामने साक्षात प्रकट हो गये। भक्त आवाक! ईश्वर ने उससे वर मांगने को कहा। उस भक्त ने वर में एक सुंदर पुष्पों का पौधा व एक खूबसूरत तितली की प्राप्ति की इच्छा प्रकट की। भगवान अपने चिर–परिचित अंदाज में 'तथास्तु' बोले और अंतर्ध्यान हो गये। भक्त ने देखा कि उसके सामने सुंदर पुष्प के पौधे के स्थान पर एक कटीला पौधा और खूबसूरत तितली की जगह कटीले पौधे पर रेंगता एक कीड़ा... था! भक्त अपने भगवान से बहुत नाखुश हुआ। सोचा, इतने दिनों की पूजा–अर्चना का यह प्रतिफल....! उसने क्रोध के साथ उस पौधे को उठाकर घर के किनारे लगे निष्प्रयोज्य सामान के ढ़ेर में फेंक दिया। नासमझी के कारण उस दिन के उपरांत उसने ईश्वर की आराधना भी बंद कर दी। समय बीतता गया। एक दिन उसकी निगाह निष्प्रयोज्य पड़ी वस्तुओं के साथ पड़े उस कटीले पौधे पर पड़ी। वह हैरान...! अरे यह क्या...., कटीले पौधे में तो बहुत ही सुंदर पुष्प निकले हैं और उस पर एक खूबसूरत तितली मंडरा रही है। वास्तव में वह कटीला पौधा एक विशेष किस्म का 'कैक्टस' था और वह कीड़ा 'प्यूपा'। उसने ईश्वर को धन्यवाद दिया और अपने कृत्य के प्रति पश्चाताप करने लगा।

बचपन में सुनी हुई इस कहानी की तरह ही हम भी ईश्वर के ऊपर विश्वास करके भी नहीं करते। उसे मानकर भी नहीं मानते। उसे हम सर्वज्ञ मानते तो हैं लेकिन उसके निर्णयों पर अविश्वास करते हैं। ईश्वर समय और आवश्यकता के अनुसार हमें वह सब देता है, जो हमारे लिए आवश्यक है, जिसके हम योग्य हैं।

-डॉ. बृजेंद्र अग्निहोत्री

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

कहानी

जंगल के दावेदार

श्यामल बिहारी महतो

तुमूल बाबू की सुबह घूमने की आदत बंद नहीं हुई थी। तीस साल पहले जो आदत बनी थी, वो आज भी बरकरार थी। कल ही गांव लौटे थे। और सुबह सुबह घूमने जंगल की ओर निकल गये थे। जंगल पहले से आधा रह गया था। यह देख उसे धक्का सा लगा, ऐसा क्यों हुआ ? मन में कई सवाल उठे। बरसों बाद उस जंगल को नजदीक से देख रहे थे, जिसे बचाने के वास्ते गांव के युवाओं ने जवानी के अपने पन्द्रह साल समर्पित कर दिये थे!

बरसों बाद आज वह उसी जंगल को फिर नजदीक से देख रहे थे, लगा झाड़ियों ने जंगल पर कब्जा कर लिया हैं। बड़े और विशाल पेड़ गधे की सींग तरह सिरे से गायब थे उसी के बीच झाड़ियों ने अपनी वजूद कायम कर ली थीं। जो पेड़ बचे हुए भी थे वह सब के सब टेढ़े मेढे तथा कुबडे थे, यह क्या हुआ ? तुमूल बाबू का ध्यान अटक सा गया था।

तभी चमन के बड़े बेटे महरू की कही बात ने उन्हें चौंका दिया। महरू कब से उनके पीछे हो लिया था, सोच में डूबे तुमूल बाबू को भनक तक नहीं हो पाई थी। महरू कह रहा था– 'बात ऐसी है काकू, कुछ समय से खटिया पटिया गैंग ने जंगल में फिर से उत्पात मचा रखी है। जंगल में एक तरह से कब्जा सा कर लिया है। रात के अंधेरे में वे लकड़ियां काट ले भागते हैं..!'

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

सुनकर तुमूल बाबू चिंतित हो उठे थे– 'क्या कह रहे हो तुम ? कहीं यह वही चरपट गिरोह तो नहीं है जिसे हम गांव वालों ने बरसों पहले जंगल से खदेड भगाये थे। यह तो बड़ी बुरी खबर सुनाई तुमने भतीजे। इस जंगल को बचाने के लिए हमने जान हथेली पर लेकर जंगल बचाओ अभियान चलाया था वो भी बारह बरसों तक–तब कहीं अपनी वजूद में लौट पाया था यह जंगल! उसका यह हस्र! बहुत ही चिंता का विषय है महरू –भतीजे!'

'हां हां, वही गिरोह है, जिसे आज लोग खटिया–पटिया गैंग कहते हैं काकू!'

दो ओर से घिरा हुआ था यह जंगल। जंगल के उत्तर–पूर्व में पक्की सड़क और सड़क से सटा हुआ था अचलगामो गांव और दक्षिण–पश्चिम में चितपुर गांव था। जंगल के बीचों–बीच से एक रास्ता सीधे पक्के मार्ग से जुड़ जाता था। जंगल के अगल–बगल बसे गांवों के स्त्री–पुरुष इसी जंगल से हर दिन काम आने वाली जलावन की सुखी लकड़ियों से लेकर कुएं की लठा–खुंटा! बकरियों के पल्हा–पात से लेकर दांतुन तक! भोज–बिहा में आमड़ा–झामड़ा, सब कुछ इसी जंगल की कोख से बाहर निकल कर आती थीं।

'जंगल है तो जीवन है! जंगल है तो सब मंगल है!' इसी भाव–विचार वाले जंगल बचाओ अभियान में शामिल हुए थे। बाद में पूरे गांव का समर्थन मिल गया था। तब कहीं जाकर इस जंगल में फुनगी निकल पाई थी..!

तुमूल बाबू बड़े गहरे भाव से जंगल को निहार रहे थे। थोड़ी देर रुककर फिर धीरे–धीरे कदम जंगल की ओर बढ़ाते चले गए सुबह की हवा और बचे खुचे पेड़ों की पत्तियों की सरसराहट ने उसके मन की बैचेनी थोड़ी कम जरूर कर दी थी। पर पशोपेश में उलझे रहे। सोचते रहे– 'कहीं वन फिर न उजड़ जाएं!' चिंता ग्रस्त हो घर लौटे थे वह।

गांव छोड़ते वक्त तुमूल बाबू एक भरा–पूरा जंगल दे गया था गांव वालों को। रिटर्न में आधा–अधूरा मिला!

तीस वर्ष तक सीसीएल की नौकरी कर तुमूल बाबू जब रिटायर हुए और घर के लिए चले तो उनके सामने गांव–समाज की कई पुरानी यादें ताजा हो उठी थीं– जीवंत –अनुभूति के साथ! और वह रोमांचित हो उठे थे। वह सोच रहे थे कि अब गांव–समाज से

फिर से जुड़ सकेंगे। गांव में रहकर खेती–बारी कर बाकी का जीवन सुख–शांति के साथ बिताएंगे। अपने सगे–संबंधियों से मिलेंगे–बतियायेंगे, बैठ सकेंगे जो तीस सालों से छूट–सा गया था।

कभी कभी मेला–परब में वह घर जरूर आते थे, पर संन्यासियों की तरह रात बिताकर सुबह निकल जाते। कोई देखता, कोई नहीं! पर अब ऐसा नहीं होगा। अब उनके पास समय ही समय था। जो जितना देर रोकना चाहे– रुक जाएगा वह। लेकिन गांव में कदम रखते ही उजड़ते जंगल ने जिस तरह उनका स्वागत किया...। रात को वह ठीक से सो नहीं सके।

गांव के हर किसी का उस जंगल से दांत–काटी रोटी का रिश्ता था। जैसे समाज से हर किसी का बेटी–रोटी का संबंध होता है। बकरियों के लिए पल्हा–पात लानी हो तो जंगल! कोनार–गुरमाना साग–पात लाना हो तो जंगल चलो! सूखी लकड़ियों की जरूरत तो जंगल! जंगली फल केन्द, भेलवा, पियार बेर खानी हो तो जंगल भागो! सब्जी के लिए, गैन्ठी, खकसा–कुन्दरी चाहिए तो जंगल चलो! मतलब जंगल न हुआ खाना–खजाना हो गया! जड़ी बूटियों का तो भण्डार ही था जंगल। गांव के सोमरा वैध की जड़ी बूटियों वाला सलसा की मांग उसके जीते जी कभी कम नहीं हुआ था। गठिया वात की अचूक दवा के रूप में प्रचलित था उनका लाल सालसा! औरतों की लाल प्रदर और स्वेत प्रदर की दवा भी जंगली जड़ी–बूटियों से सोमरा वैध बनाकर दिया करता था जो लाभकारी और गुणकारी में अचूक होता था। आज की तरह तब डॉक्टरी दवा का उतना जोर नहीं था। ऐसे में जंगल न रहे तो जानवर तो जानवर मनुष्य का जीवन भी संकट में आ जायेगा। सीधे सीधे जंगल के साथ गांव और गांव वालों का अस्तित्व जुड़ा हुआ था।

पिछले साल लॉकडाउन की आड़ में जंगल माफियाओं ने चुपके से जंगल में प्रवेश किया और रातों–रात कई ट्रक सखुआ और शीशम के मोटे–मोटे पेड़ काट ले गये। किसी को कानों–कान खबर तक नहीं हुई। वन पाल सब मिले–बिके हुए थे। एक तो लॉकडाउन की आड़, दूसरा उस चीते वाली खबर ने भी गांव वालों को काफी हद तक डरा रखा था। कुछ दिन पहले कुछ चरवाहों ने एक चीते को जंगल में घूमते हुए देखा था। डर से गांव वालों ने जंगल जाना ही छोड़ दिया था। बाद में पता चला वह असली चीता नहीं, चीते की

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

खाल ओढ़े एक लकड़ी तस्कर था। तुमूल बाबू को याद आ रहा था, पंद्रह सालों की एक लंबी लड़ाई के बाद ही जंगल में हरियाली लौट पाई थी। उसी हरियाली पर खटिया पटिया गैंग की फिर से नजर लग गई थी।

ऐसे वक्त तुमूल महतो का गांव लौटना मुरदों में जान फूंकने और कुल्हाडी की धार में सॉन चढ़ाने जैसा देखा जा रहा था।

उस जंगल की कहानी भी बड़ी रोचक और लोक जीवन से जुड़ी हुई थी। चालिस साल पहले और अस्सी के दशक में सरकारी स्तर पर जंगलों की जबरदस्त कटाई हुई थी। लगभग मोटे और पुराने पेड़ सरकार की ओर से टेंडर लेने वाले ठेकेदार काट कर लेकर चले गए थे। जब ठेकेदारों का काम खत्म हो गया तो इस जंगल पर चरपट गिरोह की नजर लग गई। करीब चार पांच साल तक इस गिरोह ने काफी उत्पात मचाई और जंगल को पुरी तरह बर्बाद कर दिया, तब गांव वालों की आंख खुली– तब भी नहीं खुलती अगर गांव के नामी किसान जया महतो की मौत नहीं होती। वह बकरियों का पल्हा लेने हर दिन जंगल जाता था। उस दिन पल्हा कहीं नहीं मिला तो दूधलता–लतरी काटने लगा था तभी झाड़ी से निकलकर एक विषैले सांप ने उसे डस लिया। घर आते–आते उसकी मौत हो गई थी। तब भी गांव वालों को जंगल बचाने की अक्ल शायद ही आती, अगर उसी जया महतो के भोज में ही सखुआ पतर की जगह पलास पतर पर खाना खाने को नहीं मिलता। तब गांव वालों की आंखें खुली और नींद से जागे– 'जंगल को बचाना होगा नहीं तो जीवन का बचना मुश्किल है..!' समवेत स्वर में निर्णय लिया गया था। तब तक जंगल उजड़कर टांड–टिकूर जैसा सफाचट हो चुका था। हगते हुए लोग दूर से ही नजर आ जाते। और प्रेम करने वाले झुरमूट ढूंढते फिरते थे, छिपने की कहीं आड़ तक नहीं बची थी। बाकी कसर सूअर मरवा लोगों ने पूरी कर दी थी। वे लोग जंगली सूअरों को मारने के लिए हर साल जंगलों में आग लगा देते, जिससे पेड़ों की नयी फूनगियों का बढ़ना रुक जाता। उनके साथ भी गांव ने सीधे मोर्चा लेकर आग लगी पर रोक लगाई– 'तुम लोग जंगल जलाओगे तो जंगल में आग लगाने वालों को हम जलाएंगे!' गांव वालों की खुली चेतावनी। बड़ी मुश्किल से आग और आग लगाने वालों पर काबू पाया गया था। इधर बकरियों के लिए पल्हा–पात और शादी बिहा में पतर–दोना

खातिर गांव की औरतें दूसरे गांव के जंगल की ओर दौड़ लगाने लगी। उधर से उल्टे पांव भगा दिये जाने लगे– 'अपना जंगल उजाड़ कर अब हमारा वाला उजाड़ने चली आ रही हैं।' कहा जाने लगा था। जंगल के बिना गांव वालों का जीवन बड़ा कठिन हो गया था। लोगों को कई मुश्किलों से गुजरना पड़ रहा था।

तुमूल महतो, जो उस वक्त तेलो हाईस्कूल का छात्र हुआ करता था, ने एक शाम अपने कुछ युवा दोस्तों के बीच ऐलान–सा कर दिया– 'गांव के उजड़े जंगल को अब हम बचाएंगे! कौन–कौन इस मुहिम में हमारे साथ शामिल हैं, सामने आएं ....!'

उमापति, चमन, घनश्याम, सीताराम, कैयला, दासो मोदी और छकन ने सामने आकर एक स्वर में कहा– 'हम सब आपके साथ हैं, दिन हो या रात चौबीस घंटे...!'

इस तरह जंगल बचाओ अभियान शुरू हुआ।

जंगल को लेकर कई बार बवाल भी हुआ। जंगल को लेकर अचलगामो और बरमसिया गांव वालों के बीच की भिंडत भी उसमें शामिल थी। वह एक अंधियारी रात थी। जंगल में लकड़ियां बढ़ने लगी थीं, तभी बरमसिया के कुछ लोग लकड़ी काटने चुपके से जंगल में घुस गये थे। खबर पाकर अचलगामो वालों ने उन्हें शिकारियों की तरह घेर लिया था। तीर–भाले की जगह कुछ देर लाठी डंडे चले, कुछ लोग घायल हुए तो फिर दुबारा बरमसिया वाले जंगल की ओर ताके भी नहीं।

सर के बाल सप्ताह दिन में उग आते हैं। जंगल में फूनगी निकलने में छह माह लग गये तब कहीं गांव वालों को सखुआ पत्तों के दर्शन हुए। एक शाम मुखिया जी की उपस्थिति में पंचायत बैठी और दो प्रस्ताव पास किये गये। जानवरों को जंगल में प्रवेश करने से सख्ती से मना कर दिया गया। प्रस्ताव का पालन नहीं करने वालों को एक सौ इक्याावन रूपये से लेकर दो सौ इक्यावन रूपये तक पंचायत में जुर्माना भरना पड़ सकता था। इस पर कई स्वर विरोध में उठे– 'तो जंगल बचाने के चक्कर में हम गाय–बैल बकरी रखना छोड़ दें ...? इतना कड़ा कानून तो अंग्रेजों का भी नहीं था..?'

'अंग्रेज भारत में शासन करने आए थे, हम जंगल बचाने निकले हैं। दोनों में काफी फर्क है ..!'

'कुछ तो सहूलियत–रास्ता दिया जाए ताकि हम बकरियों का पालन–पोषण सकें! हमारी नगद आमदनी का जरिया है गाय–बकरी!'

'पत्तों को बोरी में भर लाकर आप बकरियों को खिला सकते हैं, पर किसी भी पेड़ की फूनगी नहीं टूटनी चाहिए..!'

'और किसी ने चालाकी की तो हम लोग उसे भी नहीं छोड़ेंगे।' उमापति की इस धमकी के साथ पंचायत उठ गई थी।

बेटी सयानी हो जाए, बाहर घूमने लगे और बाप घर में सोया रहे तो लड़की के बिगड़ने का खतरा बढ़ जाता है। पंचायत से प्रस्ताव पास कर देने से ही जंगल पर कुल्हाड़ी नहीं चलेगी ऐसा सोचना ही बेवकूफी थी। ऐसा तुमूल का मत था। उन्होंने चार–चार लड़कों की एक टीम बनाई जो तीन शिफ्टों में बारी–बारी से जंगल की पहरेदारी करेंगे।

'कोई मजदूरी नहीं, कोई वेतन नहीं। जंगल बचेगा तो सब बचेंगे। यही हमारी सोच, यही हमारा लक्ष्य है।' तुमूल ने कहा था।

साथियों ने सहमति दी और रूटीन बन गया।

उधर चुपके–चुपके पेडों की फुनगियों की टुंगानी शुरू हो गई थी। कौन–कौन यह करने की जुरर्त कर रहा था, उनकी चिन्हापा भी कर लिया गया था। एक औरत पकड़ाई तुमूल के हाथों। वह रिश्ते में उसकी भाभी लगती थी। एक दिन तुमूल ने उसे रोककर माथे का बोझी जमीन पर रखने को कहा तो उसने बोझी तुमूल पर ही पटक दी थी– 'देख ला ...?'

तुमूल ने बोझी की लत ऐसे सर्र से खोली, जैसे भाभी की साड़ी खोल दी हो। कई आंखों ने देखी पुटूस की बोझी में सखुआ और पुतर की टहनी बीच में बांधी चली आ रही थी।

'छकन!' तुमूल ने संगी से कहा था, 'बोझी उठाओ! आज शाम को पंचायत बैठेगी, तभी इसका भी फैसला होगा!'

तुमूल की शादी हो चुकी थी। घर में पत्नी ने कहा, 'घर में आकर शनिचरिया की मां बड़ी रो रही थी! पहली बार की बात थी। छोड़ देते!'

'कभी–कभी बकरी बाग–बगीचा को और मेहरारू जंगल–झाड़ को बर्बाद कर देती है। दोनों को कन्ट्रोल में रखने से ही यह सब बचेगा।' तुमूल ने कहा।

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

शाम को जंगल बचाओ अभियान समिति की मीटिंग हुई। जंगल बचाओ अभियान का पहला साल। एक कामयाब साल। मीटिंग में पकड़ाई भौजी की बोझी का भी फैसला होना था। बैठक में खचर–खचर शुरू हो गई थी। लेकिन साल भर में जंगल में जो फूनगी फुटी और हरियाली लौटी थी उसे देख सारा गांव खुश था। बच्चे–बूढ़े खुश थे। जंगल के सभी ठूंठ लकड़ियों से बांस करील–सा पेड़ों के बढ़ने से गांव के युवाओं में एक जोश–सा भर दिया था।

'साल भर में ही जंगल में जो हरियाली लौटी और पेड़ पौधों में जो विकास हुआ। गांव वालों के सहयोग के बिना संभव नहीं था। इस जंगल को हम एक विशाल जंगल में बदल देंगे। आप सबों से इसी तरह की सहयोग की आशा रखते हैं!' तुमूल ने सभा के बीच अपनी बात रखते हुए कहा था– 'अगर किसी को कुछ कहना है तो बेझिझक आकर कहिए!'

'हमारा एक ही मकसद है, जंगल को फिर से हरा–भरा कर देना ताकि हमें दूसरों से कुछ मांगना न पड़े।' उमापति ने कहा।

'वनवा के फिर से हरा–भरा देख तोहनीं से बडी खुश हियो हम!' सोमरा वैध ने कहा, 'जड़ी बूटी सब अब बड़ी जल्दी मिल जा हअ! पहिले खोजते खोजते थअक जा हलिय!' वैध जी वाह–वाह कर सभी को शाबासी दे रहे थे।

'अभी साल दो साल, बोझा–बाझी और पल्हा बोझा बंद रहना चाही!' चमन का विचार था।

अंत में कुछ नोक–झोंक के बाद जंगल बचाओ अभियान समिति ने शनिचरिया की मां की बोझी वाले केस को यह कहते माफ कर दिया कि साल भर में यह इकलौता मामला है। पर इस तरह कोई दोबारा न करें।

'इस तरह लायते अगर हम ककरो देख लेलिअ तो ओकरा हम पिंधना खोइल देबअ!' शनिचरिया की मां का ऐलान सुन सब खूब हंसे।

'ठीक है!' किसी ने कहा।

'एक चोर जब दूसरे चोर पर नजर रखने लगे तो चौकीदारी का काम आसान हो जाता है।' तुमूल ने कहा, 'पर हमें जागते रहना है।'

ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

छोटी–मोटी घटनाओं को छोड़ दें तो उस दिन के बाद का दस साल का एक लम्बा समय बीत गया और जंगल अपने पैरों में खड़े हो गया था। पेड़ अब आसमान को आंख दिखाने लगे थे और गांव वालों को उनकी जरूरत के हिसाब से सूखी और कच्ची लकड़ियां मिलने लगी थीं। बकरियों के लिए पल्हा पात के लिए छूट दे दी गई थी। जंगल अपने पूरे वजूद में लौट आया था जिसे देख गांव वालों में काफी खुशी थी। तभी तुमूल बाबू को नौकरी लग गई। एक भरा–पूरा जंगल गांववालों को सौंप वह कोलियरी चले गये। और फिर जैसे कोलियरी के ही होकर रह गये थे। गांव और जंगल से उनका नाता टूटता चला गया था। गांव के लिए मेहमान और जंगल से अंजान होते चले गये थे।

तुमूल बाबू की सोच का क्रम भी टूटा था। लौटने के क्रम में महरू से उसने पूछा– 'जंगल कटने की सूचना तुम लोगों ने फॉरेस्ट विभाग को कभी दिया ..?'

'हम पांच लड़के दो बार फोरेस्ट रेंजर से जाकर मिले, हां– वनपाल को भेजेंगे, कहकर टरका दिए, आज तक कोई झांकने तक नहीं आए...!' महरू ने बताया।

'आज शाम गांव वालों की मीटिंग बुलाओ, गांव में ढोल ढेढाय करवा दो.. जंगल की मीटिंग है..सबको आना है.. लो यह कुछ पैसे रख लो, ढोल वाले को देना होगा.!'

'ठीक है काकू!' कह महरू अपने घर चला गया। वह काफी खुश था। यही तो वो चाहता था। जंगल बचाने की लड़ाई में कोई तो आगे आए, कोई तो इस अभियान का नेतृत्व करे। जंगल बचाने के लिए उसे कई डंडों की तलाश थी– तुमूल बाबू के रूप में एक मजबूत लाठी ही मिल गयी थी।

उस दिन शाम को बरसों बाद जंगल बचाओ अभियान की मीटिंग हुई। परन्तु अपेक्षा अनुरूप लोग मीटिंग में शामिल नहीं हुए। कारणों का स्पष्ट पता न चल सका। कुछ ने रोजी रोजगार के लिए युवाओं को बाहर चले जाने की बात कही तो बहुतों ने दिन–रात खदानों से कोयला चोरी करने जाना, इसका सबसे बड़ा कारण बताए थे। यह देख–सुन तुमूल बाबू जरा भी निराश नहीं हुए। वह बड़े ही जीवट और जिद्दी किस्म के इंसान थे, जो ठान लेते, उसके लिए जान लड़ा देते। जल्दी से हार नहीं मानते और हताश भी नहीं होते।

ऐसे कई उदाहरण उनके जीवन के साथ जुड़े हुए थे। कोलियरी में काम करते हुए मजदूरों के हक अधिकार के लिए लड़ने–भिड़ने का खासा अनुभव और तजुर्बा लिए हुए वह गांव लौटे थे। इसलिए मीटिंग में शामिल हुए कम लोग और उनके बंटे विचारों को सुन उनकी सोच में कोई फर्क नहीं पड़ता दिखा था। वह इसी बात से उत्साहित थे– 'कुछ भी हो परन्तु जंगल बचना चाहिए।' मीटिंग में शामिल लोगों ने एक स्वर में कहा था। यही बात तुमूल बाबू को जंगल बचाओ अभियान को आगे ले जाने के लिए काफी थी।

'जंगल बचाओ अभियान फिर से शुरू किया जा रहा है, इसकी लिखित सूचना थाने में दे दी जाए!' कुछ का सुझाव आया था तो मीटिंग में कुछ मोबाइलिया लड़कों ने बेतूका सवाल भी खड़े किए– 'जंगल बचाना सरकार का काम है, हम क्यों मुसीबत मोल लें..!'

तुमूल बाबू ने कहा– 'हर काम अगर सरकार ही करेगी तो फिर पढ़–लिखकर तुम सब क्या करोगे ..? सरकार आपके कपड़े की गंदगी साफ करने नहीं आएगी– खुद करना होगा! जंगल बचेगा तभी तुम्हारा मोबाइल बचेगा और तभी तुम अपने छॉपी वाले उड़ते बालों का सेल्फी ले सकोगे...!'

लड़कों की बोलती बंद हो गई।

श्यामल बिहारी महतो

तारमी कोलियरी सीसीएल में कार्मिक विभाग में वरीय लिपिक स्पेशल ग्रेड पद पर कार्यरत और मजदूर यूनियन में सक्रिय श्यामल बिहारी महतो भावप्रवण कथा–साहित्य के प्रणयन और सशक्त व्यंग लेखन के लिए जाने जाते हैं।

संपर्क : मुंगो, बोकारो, झारखंड
मो. : 6204131994
ईमेल : shyamalwriter@gmail.com

सप्ताह दिन तक जंगल बचाओ अभियान का सघन बैठकी अभियान चला। तुमूल बाबू ने खाना पीना त्याग दिया था। बस उनकी एक ही धुन लोगों को इस मूवमेंट से जोड़ना। जंगल बचाने की बात गांव के टोले–टोले तक पहुंचाना। इधर घर में इस बात को लेकर पत्नी नाराज, 'जंगलवा के झमेले में काहे पड़ते हैं, अब इन बूढ़ी हड्डियों को आराम दीजिए और घर में बैठिए!' तुमूल बाबू ने इसका कोई जवाब नहीं दिया।

जंगल की इस मुहिम से बेटा भी खुश नहीं लग रहा था, 'बचपन से लेकर आज तक तो लड़ते भिड़ते रहे हैं, अब तो विराम दीजिए, जिन लड़कों को आप मुहिम से जोड़ने की बात करते हैं उन्हें मोबाइल से फुर्सत मिले तब न!'

'बेटा, जीवन में कभी पढ़ना और लड़ना बंद नहीं होता। कहावत सुनी है न– जीवन एक कुरूक्षेत्र है युद्ध चलता रहता है!'

यह शब्द भी आपने अपने लिए गढ़े हुए हैं!'

बेटे ने इसके आगे फिर कभी कुछ नहीं कहा। वह बाप के उसूलों से बचपन से वाकिफ था।

सप्ताह दिन बाद फिर एक मीटिंग रखी गई। इस बार लोगों ने बढ़–चढ़कर मीटिंग में हिस्सा लिया और सब ने एक स्वर में आवाज दी– 'हर हालत में जंगल बचाया जाए...!'

एक लिखित सूचना थाने को दे दी जाएं..!" लोगों ने पुनः जोड़ा था।

दूसरे दिन गांव वाले थाने पहुंचे और मदद की गुहार लगाई, 'जंगल बचाने में हमारी मदद की जाए...!'

'यह फोरेस्ट विभाग का मामला है। हर काम थाने वाले ही करेंगे तो फोरेस्ट डिपार्टमेंट वाले क्या भिन्डी बाजार की रखवाली करने के लिए वनपालों को पाले रखें है ? जाइए अपना दुखड़ा उन्हें सुनाइए जाकर...!' पूरी बात सुनी भी नहीं, उल्टे थानेदार ने खड़े खड़े सभी को झाड़ दिया था।

'इतना तो हमें भी मालूम है सर! जाना तो वहां भी है। हम आपको यह जनाने आये थे कि लकड़ी तस्कर हमारे गांव के जंगल को उजाड़ने पे तुले हैं वे अगर अपनी हरकतों से बाज नहीं आए तो हम भी चुप नहीं बैठेंगे– उजड़ते जंगल को देख हाथ पे हाथ धरे खड़े नहीं रहेंगे, अपना जंगल बचाने के वास्ते जान भी लडा देंगे हम!

तब आप अपना कानून लेकर गांव में घूमने मत लगिएगा....!' कह तुमूल बाबू लड़कों को साथ लिए थाने से बाहर निकल आए थे।

'इस बूढ़े में अभी भी बहुत जान बाकी है...!' थानेदार बोल उठा था, 'कुछ तो करेगा यह...!'

थाने से फूटबॉल की तरह लात खाये–खिसियाए तुमूल बाबू सीधे फोरेस्ट विभाग में जा घुसे। दस बारह की संख्या में लोगों को अचानक सर पे सवार देख ऑफिस में मौजूद रेंजर रघुवीर यादव 'क्या बात है.. क्या बात..?' कहते हुए खड़े हो गए थे, 'कौन हैं आप लोग और इस तरह ऑफिस में घुसने का क्या मतलब है..?'

'हम अचलगामो गांव से आए हैं, हमारे गांव के पास जो जंगल है, उस जंगल से बड़े पैमाने में लकड़ी तस्करी हो रही है और हमारे पास जानकारी है, उनके साथ आपके कई वनरक्षी भी मिले हुए हैं। उन्हें समझाइए वरना गांव के तपाकी लड़के अबकी उन्हें छोड़ेंगे नहीं.. यही सूचना देने आए थे, चलते हैं!' और किसी जवाब का इंतजार किए लड़कों के साथ तुमूल बाबू तुमली का काटा आदमी की तरह वहां से भी निकल गये थे।

पीछे रघुवीर यादव को एक वनरक्षी से कहते सुना गया, 'बाप रे बाप! यह आदमी था या आफत, स्याला हिला के चला गया...!'

लौटते वक्त रास्ते में ठाकुर पत्रकार मिल गया, उसने तुमूल बाबू से कहा, 'आप लोगों को क्या लगता है, थानेदार और रेंजर आपकी मदद करेंगे ?..सब मिले हुए हैं, सबको हफ्ता मिलता है, अखबार में छापने से हमें मना करते हैं.. जो करना होगा, आप लोगों को अपने दम पे करना होगा। लेकिन होशियारी से.. हां हम गांव वालों के साथ है...!'

सब्जी खरीदने की उम्र में थाने में जाकर शेर की तरह दहाड़ने और फोरेस्ट विभाग के ऑफिस में घुस कर लंका काण्ड करने की धमकी देने के बाद तुमूल बाबू को यह नहीं भूलना चाहिए था कि लकड़ी तस्कर भी उसके साथ कोई काण्ड कर सकते हैं और जिसकी प्रबल संभावना भी थी। और ऐसा हुआ भी। तुमूल बाबू पर उस वक्त जानलेवा हमला हुआ जब वह जंगल भ्रमण कर शाम को महरू के साथ घर लौट रहे थे। तभी एक सुनसान–सी जगह पर झाड़ियों के पीछे घात लगाए छिपे सात–आठ लोगों ने लाठी–डंडों से अचानक उन पर हमला कर दिया। तड़तड़ा लाठियां बरसाने लगे। महरु

बीच–बचाव को कूदा तो उसे भी लहुलुहान कर सभी झाड़ियों के पीछे गायब हो गये।

हमले की खबर से गांव में एक सनसनी फैल गई। घर के जलते चूल्हे छोड़ लोग गली में आ गये और बियारी–पानी का समय होते होते, पूरा का पूरा गांव तुमूल बाबू के घर के बाहर जमा हो गया। सबों की एक ही राय– 'हम सब तुमूल बाबू के साथ हैं!'

'हम बदला लेंगे...!' युवा बेहद उत्तेजित थे।

घर में उनका बेटा भी गुस्से में था– 'बाबू जी हम आपको खोना नहीं चाहते, आज आपको कुछ हो जाता तो...?'

'इन्हें हमारी नहीं, जंगल की चिंता है..!' पत्नी बोली।

तुमूल बाबू ने किसी का जवाब नहीं दिया।

'इस मार–पीट की सूचना थाने में दे देनी चाहिए...!' बाहर कोई कह रहा था।

तभी सर पे पट्टी बांधे तुमूल बाबू घर से बाहर निकल आए।

'कोई लाभ नहीं होगा..सब मिले हुए...!' उन्होंने कहा, 'गांव के कुछ लोग भी उनमे शामिल हैं, आज की घटना इन्हीं लोगों की साजिश का परिणाम है, अगर वे यहां है तो सुन लें, हमें अपनी जान की डर नहीं है। इस जंगल को बचाने के खातिर हम पहले भी लड़े थे, आज भी लड़ने को तैयार हैं लेकिन जंगल को किसी भी सूरत में लूटने नहीं देंगे!'

'हम सब आपके साथ हैं...!' युवाओं ने हुंकार भरी।

'हम सभी आपके साथ हैं..!' पूरा गांव बोल उठा।

उसी पल बाहर से दो लड़के पहुंचे और तुमूल बाबू के कानों में कुछ कहने लगे। सुनकर तुमूल बाबू के चेहरे पर जबरदस्त बदलाव हुआ। वह अपनी चोटें भूल गए और दर्द को सीने में दबाते हुए कहा, 'जंगल के दुश्मनों को सबक सिखाने का समय आ गया है। अभी के अभी हम उन पर धावा बोलेंगे.. कितने लोग तैयार हो...?'

'हम सब तैयार हैं..!' सारे गांव का एक स्वर।

'जंगल बचाने के लिए जान भी चली जाए तो भी हम पीछे नहीं हटेंगे...!' युवाओं ने जोड़ा था।

'आप पहले भी जंगल बचाओ अभियान का नेतृत्व कर चुके हैं, आज भी आप को ही करना होगा काकू!' महरू भी सर पे पट्टी बांधे सामने आकर खड़ा हो गया था।

'हां हां आज से आप हमारे अगुआ हैं... हर तरह से हम सब आपके साथ हैं...!' युवाओं ने आवाज बुलंद की।

एक जंगल में समूचे गांव का मंगल छिपा हुआ था! चंद मिनटों में ही माहौल में काफी बदलाव आ गया था।

'भाईयों और नौजवानों, इतिहास गवाह है, जोरू–जमीन और जंगल तभी सुरक्षित बच पाया है, जब उसके बचाव में लोगों ने खून बहाये हैं..!' तुमूल बाबू जैसे रात को ललकार रहे थे, 'देखा न अपने विरोध में उठने वाली आवाज को किस तरह दबाने की कोशिश की गई, उन्हें मालूम है कि हमारे पास गोली बंदूक नहीं है लेकिन उसे यह मालूम नहीं कि जंगल बचाव में उठे ये सैकड़ों हाथ किसी को भी मिट्टी में मिलाने के लिए काफी है, उनकी लाठी–गोली का जवाब देने के लिए हमारे पारम्परिक हथियार ही काफी है... बस हमें एक साथ मिलकर दुश्मनों का मुकाबला करना होगा, आप सब तैयार हैं न..?'

'हम सब आपके साथ हैं!' सामूहिकता के स्वर से रात कांप उठी।

पारम्परिक हथियारों से लैस अचलगामो वाले जब चले तो उनमें एक ज्वार–सा उमड़ रहा था। उत्तेजना के कारण युवाओं के पैर सीधे नहीं पड़ रहे थे। जैसे रात के अंधेरे में किसी ने मशाल जला दी हो। उनके भावों से प्रतीत होता कि उनमें चट्टानों से भी टकराने की हौसला आ गई हैं। तलवार–फरसा और तीर–धनुष लिए जंगल की ओर उनका निकल जाना किसी मिशन से कम नहीं था। कोई घंटा भर बाद ही हथियारों से लैस गांव वालों ने लकड़ी चोरों को जंगल में उसी तरह चारों ओर से घेर लिया था, जैसे शिकारी जंगली सूअरों को घेर लेते हैं। इस घेरे बंदी से अनजान लकड़ी चोर उस वक्त दोनों ट्रैक्टरों पर लकड़ियों की लदाई कर रहे थे। जमीन पर लेटकर दूर से ही तुमूल बाबू ने उन्हें ललकारते हुए कहा था– 'लकड़ी चोरों, गांव वालों ने तुम सबको चारों ओर से घेर लिया है, जान प्यारी है तो हाथ .पर उठा कर सभी खड़े हो जाओ ...!'

सुनकर ही लकड़ी चोरों को पसीना छूट गया। लेकिन वे भी कम तैयारी के साथ नहीं आए थे। रिवाल्वर साथ लेकर आए थे। दोनों ओर से तनातनी शुरू हो चुकी थी। और वाक् युद्ध भी– 'शाम

की कुटाई से सबक नहीं सीखा– मरने चले आए...!' उस ओर से कहा गया था।

'अब देख लो कौन मरने चले आए हैं..!' तुमूल बाबू ने ताल ठोकी थी।

तभी आवाज की दिशा में गोली चल गई– 'धांय..धांय.!'

सभी के जमीन पर लेटे होने से लकड़ी चोरों की दोनों गोलियां बेकार गई। जवाबी हमले की बारी थी। तभी खड़े होकर तुमूल बाबू ने ललकारते हुए सभी से कहा था– 'तीर चलाओ.. सन.. सना के....!'

अगले ही पल लकड़ी चोरों के बीच चीख–पुकार शुरू हो गई, 'ओ मां! मत चलाओ..!' पहली चीख।

'मैया गो मैया..!' दूसरा चीखा।

'मां.य.अ.अ..!' यह चीख जंगल के अंधेरे को चीरती निकल गई थी...! इसी के साथ भागते कदमों की आवाजें ...!

जंगल काण्ड की सूचना किसी ने रात को ही थाने को दे दी थी। सुबह गांव में पुलिस आई किसी ने मुंह नहीं खोला। थानेदार तुमूल बाबू से मिला और चोट का कारण पूछा, 'आपको यह चोट कैसे लगी..?'

'छत से नीचे उतर रहा था, सीढ़ी पर पैर फिसल गया, गिर पड़ा... बूढ़ा हो गया हूं न..!' तुमूल बाबू का जवाब था।

अगले दिन अखबारों की सुर्खियां थीं– 'रात को लकड़ी चोरों पर गांव वालों का हमला। दो घायल, एक की हालत नाजुक! लकड़ी से लदे दो ट्रैक्टर ट्राली जब्त!'

विकास का आधार
मानवाधिकार
डॉ. बृजेन्द्र अग्निहोत्री
आईएसबीएन : 978-93-90548-82-8 संस्करण : 2020, मूल्य : 225/-

कहानी

स्वाभिमानिनी

जयश्री बिरमी

शादी होते ही मीना ससुराल पहुंच गई सिमटी सी शर्माती हुई गृहप्रवेश की रीत पूरी की और घर के दिवानखंड में बैठी थी। लाल सुर्ख जोड़ा पहने और हाथों में कंगन चूड़ियां, पावों में पायल बिच्छुएं,हाथों में अंगूठियां और पांचागला (पंचफुल) बाजूबंद गले में तीन छोटे बड़े हार माथे पर टीका शिंका आदि गहनों से लदी शर्म से सर जुकाए बैठी थी और घर का मुआयना कर रही थी। जहां बैठी थी वहां सामने डाइनिंग टेबल थी जिसके .पर बे सलीके से तीतर बितर मिठाईयों के डिब्बे लदे हुए थे। कुछ फालतू चीजें भी पड़ी थी। उसके आगे रसोईघर था सिर्फ बंद गैस पर रखे कुकर और पतीले पड़े थे। वैसे कहें तो शादी वाले घर में जितनी भी अफरा तफरी हो सकती थी, सभी वहां मौजूद थी। थोड़ी देर में ही सब फ्रेश होने चले गए तो मीना की ननंद आई और उसे उनके कमरे में ले गई। वह अपने कमरे में पहुंची तो वहां उसके समान में से अपना बैग अलग कर कपड़े निकाले और इधर–उधर देख रही थी तो उसकी ननंद ने उसे हंसी के साथ हाथ पकड़ बाथरूम तक ले गई।

नहा–धोकर एकदम ताजा महसूस कर रही थी अपने आप को। नजर के सामने से पिछले कुछ दिन चलचित्र की भांति गुजर रहे थे। कैसे अमरीका से आए मनोज का रिश्ता आया तो घर में सब ही खुश हो गए कि वह इतने विकसित देश में ब्याह जायेगी, लेकिन उसे इस बात में जरा भी गुरूर नहीं था उसे तो अपने देश में भी

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

रहना अच्छा लगता था। जब वे लोग पहली बार घर आएं तो मनोज के माता–पिता और चाची भी थी। दोनों ओर से बातचीत हुई और थोड़ा सकारात्मक वातावरण हुआ तो उन दोनों को मिलने का समय मिला। दोनों ने कुछ सामान्य–सी बातें की और एक–दूसरे के बारे में थोड़ी जानकारी भी ली। अंततः दोनों और से हां होने पर रोका हो गया। हालाकि मीना कुछ ज्यादा स्पष्ट नहीं थी रिश्ते के बारे में, लेकिन कभी न कभी तो शादी करनी ही हैं, और आगे जा कर इससे अच्छा रिश्ता नहीं मिला तो... ये सोच हामी भर दी। लेकिन एकदम प्रसन्नता से स्वीकार नहीं किया था मीना ने।

सगाई और शादी एक महीने के अंदर ही हो गई। आज वह ससुराल में बैठी ये सब सोच रही है। बहुत ही थोड़े वक्त में रोका, सगाई और शादी होना... सब स्वप्न सा लग रहा था उसे। ये पहला दिन था ससुराल में। चौके चढ़ने की रस्म थी। घर की सभी महिलाएं रसोई में एकत्रित हो उसे घेरे खड़ी थीं। वैसे उसकी मां ने सभी सामग्री के साथ उसे समझाया था कि कैसे बनता हैं हलवा। आखिर उसने अपनी रसोई कला दिखाते हुए हलवा बनाया। वैसे बना तो अच्छा था, किंतु नई बहू के मान में वह एक विलक्षण स्वादिष्ट हलवा बन गया था। जिसे देखो वही हलवे के गुण गा रहा था और उसकी झोली में शगुन के रुपए आते जा रहे थे। सभी खुश थे और वह भी अभी अच्छा महसूस कर रही थी। याद तो आ रही थी मां और पिताजी की, लेकिन मन मना लिया था उसने।

तीन दिन बाद उसके पिताजी पग फेरे के लिए लेने आ गए। उनकी भी खूब अवभागत की गई और वह पहुंच गई अपने घर, कुछ दिनों के लिए ही सही किंतु बहुत अच्छा लगा अपनों से मिलकर। वही घर, वही कमरे और उसका अपना कमरा जिसे वह बड़े ही चाव से सजाया करती थी। मां का प्यार तो उमड़ पड़ा था उसे दहलीज पर पाके, खूब प्यार से गले मिलते ही आंखे बरसने लगी थी उनकी। अपने कमरे में लेटकर एक सकून मिला था उसे, अपनेपन वाला।

तीन दिन कहां बीत गए पता ही नहीं चला और मनोज अपने छोटे भाई के साथ उसे लिवाने आ गए। दोनों की आगता–स्वागता के बाद सब बैठ इधर–उधर की बातें करते रहे। मनोज की बातों में

पहली बार अमेरिका में रहने का और अपनी ःचे ओहदे की जॉब का अहंकार दिखा जो सब को थोड़ा बुरा लगा। वह अमेरिका के साथ भारत की तुलना कर अपने ही देश की हेठी करने पर तुला था। लेकिन मनोज जवांई था, इसलिए बुरा लगने के बावजूद कोई कुछ भी नहीं बोला। उसी दिन वह अपना घर छोड़ अपने पति और ढेर सारे तोहफों के साथ अपने ससुराल लौट आई।

दोनों अपनी हनीमून पर गए। तीन–चार दिन में भी उतनी नजदीकियां नहीं आईं, जो नवविवाहितों में आ जाती हैं। वैसे सबकुछ ठीक था। कुछ भी ऐसा नहीं था, जो नहीं होना चाहिए। लेकिन कुछ तो था जो उन दोनों के बीच एक महीन–सी लकीर खींचें हुए था। दोनों घर वापस आ गए। दूरियां थोड़ी दूर तो हुई थी। पति–पत्नी बने अब दो हफ्ते हो चुके थे। शादी को रजिस्टर ऑफिस में करवाया गया, ताकि यूएस जाके मीना के पेपर्स फाइल करने में आसानी हो जाए। सब कागजी कार्यवाही करने में एक महीना हो गया और मनोज के जाने की तारीख नजदीक आने लगी। मीना कुछ उदास और असुरक्षित सी महसूस कर रही थी। मनोज के जाने के बाद उसके ससुराल वाले न जाने कैसा व्यवहार करेंगे और कैसी होगी उसकी आगे की जिंदगी... ये चिंता उसे होने लगी थी। उसने अपनी मां से भी अपनी चिंता के बारे में बात की थी, पर माएं तो हमेशा ही सकारात्मक ही होती हैं, अपने बच्चों के मामलों में वैसे ही वह कुछ ज्यादा ही होती हैं।

मनोज के विदेश गमन का दिन नजदीक आ रहा था तो मीना ने पूछ ही लिया कि वहां जाकर भूल तो नहीं जायेगा वह मीना को! और चाहे मजाक ही में सही उसने कहा था कि 'शायद'। और फिर मीना को असुरक्षा की भावना ने और अधिक घेर लिया था।

अब वो दिन भी आ गया जब वह चला भी गया। दुःख तो हुआ मीना को भी, लेकिन असुरक्षा ने फिर उसे घेर लिया।

वह उदास रहने लगी तो उसकी सास ने उसे खुश करने के लिए उसे मायके जाकर थोड़े दिन रह के आने की सलाह दी। वह भी जा के मां की गोदी में सर रख सकून पाने चली गई। एक महीना मां और पिताजी के साथ कैसे निकल गया पता ही नहीं चला। लेकिन

कुछ दिनों से मन ठीक नहीं था, शायद उदासी की वजह से ऐसा लग रहा था।

जब ससुराल में आई तब कुछ ज्यादा तबियत बिगड़ी लग रही थी। सासू मां ने डॉक्टर को बुलाया। वैसे उसकी माहवारी आने के उपर 15 दिन होने को थे, किंतु उस ओर उसका ध्यान ही नहीं था। डॉक्टर महिला होने के नाते कुछ ज्यादा ही पूछताछ कर रही थी और जब उसकी सेहत के बारे में पूछा तो उसने अपनी माहवारी की तारीख बता दी तो स्पष्ट हुआ कि उसे गर्भधान हुए को आज डेढ़ महीना हो चुका था। घर में सब बहुत खुश हुए, किंतु मीना खुश होने की बजाय आशंका से भर गई। पढ़ी–लिखी होने के बावजूद उसे कुछ समझ नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा था उसके साथ। मनोज का फोन रोज ही आता था लेकिन एक अपनेपन की कमी ज्यादा थी, एक व्यवहारिक संबंध में जैसे बात होती हैं वैसी ही बात करता था। और जब उसे कहा गया कि वह बाप बनने वाला था तो खुश नहीं हुआ। बधाई दी उसे और फोन बंद कर दिया। अपने पेट में पल रहे बच्चे को पाल रही मीना अब अपने और अपने बच्चे के भविष्य के बारे में चिंता में व्यग्र रहने लगी। मनोज के फोन आना अब एक व्यवहारू सी बात थी। प्यार या लगाव पहले जो दिखावे का ही था... वह भी धीरे–धीरे गायब होने लगा। जब उसकी मां से बात हो रही थी तो उन्होंने मीना को

जयश्री बिरमी

अंग्रेजी और गृहविज्ञान की शिक्षिका रह चुकी जयश्री बिरमी जन सामान्य के भावबोधों को अभिव्यक्त करने वाली सशक्त हस्ताक्षर हैं।

संपर्क : अहमदाबाद, गुजरात
ईमेल : jbirmiin@gmail.com

यूएस ले के जाने की बात की तो 'प्रसूति के बाद ही संभव होगा', ऐसा बोल बात टाल गया था मनोज।

मीना ने अपना पूरा ध्यान अपने और होने वाले बच्चे की सेहत का ख्याल रखने में लगा रहने लगा। सास भी काम में वह मदद करे, ऐसा कई बार जाता चुकी थी और मीना भी जितना हो सके उससे ज्यादा ही मदद कर देती थी। खाना बनाने से लेकर झाड़पोंछ तक के बाकी काम के लिए तो कामवाली बाई आती ही थी। ऐसे ही कब नौ महीने निकल गए पता ही नहीं लगा, और उसकी प्रस्तावित तारीख को कुछ दिन ही रह गए थे। उसका शरीर खूब फुल गया था... खास कर पेट और पीछे का हिस्सा, सब कयास लगाते थे कि लड़की होगी उसे तो वह खुश होती कि अपनी प्रतिकृति पाएगी वह। गुड़िया के प्यार में वह अभी से ही दीवानी हुई जा रही थी। और आ गया वह दिन! रात में उसे खूब दर्द उठा तो उसने सास को बताया तो सब तैयार हो अस्पताल पहुंचे और उसे भर्ती करवाया फिर उसकी मां और पिताजी को भी खबर कर दी तो वो लोग भी दौड़े–दौड़े आए। सब राह देख बैठे थे कि कब खबर आए नए मेहमान के आने की। और आई खबर, दाई बड़े ही नटखट अंदाज में हँस के बोली– 'नेग दो जी लड़का हुआ है।' लड़के का संदेश सुन सभी की खुशी से बांछे खिल गई। उसकी सास ने उसे 2000 रुपए निकाल कर दिए तो वह और मांग रही थी तो उसने वचन दिया कि अस्पताल से जाते वक्त उसे खुश कर देंगे तो वह चली गई। कुछ देर बाद जब मीना को कमरे में लाये तो सब एक–एक कर कमरे में जा बच्चे को देख आए। सुंदर–सा, छोटा–सा राजकुमार लग रहा था वह सफेद चादर में लिपटा लेता हुआ था पलने में। दो दिन बाद उसे अस्पताल से छुट्टी मिल गई।

अब तो बस उस छोटे–से बच्चे की चाह और संभाल में ही अपना ध्यान लगाने वह लगाने लगी थी, किंतु सास थी कि उसे जली–कटी सुनाने से बाज नहीं आती थी कि उसके पति ने भी उसकी ही गलती से बेवफाई की थी, वह उसे प्यार नहीं दे पाई थी, इसीलिए वह दूसरी औरत की और आकर्षित हो उससे विमुख हो गया था। यही तानें सुनते–सुनते कान पक गए थे। लेकिन उसके पास

कोई चारा भी न था। उसे अपने बेटे का नाम मनन रखना था, लेकिन सास ने उसका नाम उसकी अपनी मर्जी से विनय रख दिया था। बोली थी कि कुछ तो नम्र बनेगा, मीना जैसा ढीठ तो नहीं बनेगा। ऐसे ताने सुनते सुनते विनय सात महीने का हो गया, लेकिन उन लोगों की जुबान न रुकती थी और न ही थकती थी। एक दिन बड़े दिनों से बंधा हुआ सब्र का बांध उसकी मां के सामने टूट गया, जब वह मिलने आई थी और उनकी गोद में सिर रख कर वह बहुत रोई थी। अपने दिल का गुबार मां के सामने रख दिया। उसकी मां एक स्वाभिमानी औरत थी। वह उठी और उसकी सास के पास बैठक वाले कमरे में गई और मीना के साथ होने वाले सलूक की वजह पूछी तो मीना की सास ने उसे मनहूस कहा और बताया कि मीना की वजह से उन्होंने अपना बेटा खोया था। अब गुस्से में भरी मीना की मां ने हमेशा के लिए मीना को अपने घर ले जा रही हैं ये बता दिया। पूछा नही, बताया। वह भी तैयार हो बेटे को गोदी में ले अपनी मां के साथ चल दी।

ससुराल को अलविदा तो कर दिया, लेकिन उससे नाता तो नहीं टूटा था, क्योंकि अभी भी वह मनोज से वैवाहिक बंधन से जुड़ी हुई थी। मां के घर को मायका कहते हैं तो वह उसका कैसे हुआ। यह प्रश्न हमेशा ही परेशान करता था। वह सोचा करती थी, मायका मां का घर, ससुराल सास का घर तो उसका अपना घर कौन–सा! अब उसे अपने घर की तलाश थी, और आरजू भी!

कुछ दिन रहने के बाद उसने सोचा कि अब उसे कुछ काम करना चाहिए। काम तो वह उसकी मां के साथ सब कर ही लेती थी, लेकिन आर्थिक प्रवृत्ति ही उसे कुछ पाने में मदद कर सकती हैं। कुछ बन जायेगी तो अपना घर बना लेगी और तब तक विनय भी कुछ बड़ा हो जायेगा तो वह उसे स्कूल भेज अपने काम पर भी जा सकेगी। वैसे भी विनय अब उसकी मां से हिलमिल गया था। उन्हीं से नहाता और खाता भी था, सिर्फ सोने के लिए ही वह मीना के पास आता था। अब मीना ने सोच लिया कि वह कुछ कोर्स कर के नौकरी कर लेगी। उसने कंप्यूटर का कोर्स कर लिया और आईटी कंपनी में नौकरी मिल गई। तनख्वाह भी ठीक ठाक थी तो उसने स्वीकार कर

ली। सुबह नौ बजे अपना नाश्ता खाकर, दोपहर का खाना बनाकर ले निकल जाती थी। अपनी काबिलियत से दफ्तर में उसकी बहुत ही इज्जत बढ़ गई थी। उसे खूब बढ़ती मिलती रही और कुछ साल में वह डायरेक्टर बन गई।

एक दिन उसके देवर का फोन आया और मिलने के लिए समय मांगा तो उसने रविवार के दिन घर पर बुला लिया। रविवार के दिन वैसे वह देर से उठती थी, लेकिन देवर आने वाला था तो जल्दी उठ तैयार होकर नाश्ता बनाकर वह विनय के साथ खेल रही थी। उसका देवर आया और नमस्ते कर बैठ गया। विनय के लिए चॉकलेट लाया था। वह देकर विनय के साथ कुछ औपचारिक बात जैसे कौन–से स्कूल में जाता है, कौन–सी क्लास में पढ़ता है आदि बातें कर मीना की और देखकर बोला कि उसके दस्तखत चाहिए उसे। मीना समझ गई उसने विनय को नानी की पास जाने के लिए बोला और जब वह चला गया तो उन कागजात को हाथ में ले दस्तखत करने लगी तो उसके देवर ने पढ़ने के लिए बोला तो वह बोली तलाक के कागजात हैं, ये वह जानती थी। दस्तखत कर उसने उसे लौटा दिए तो वह झट से उठा और चला गया। उस दीन एक बहुत बड़े बोझ से अपने आप को मुक्त पा रही थी। एक एहसास जिसने उसे थोड़ा सा हल्कापन महसूस करवाया, बोझ मुक्त हो गई थी वह।

अब विनय कॉलेज में आ गया था और वह भी उम्र के उस दौर में पहुंच चुकी थी, जहां थोड़ी सी थकान महसूस हो रही थी। वह अपनी शादीशुदा जिंदगी के हर पल, हर एहसास को भूल चुकी थी। एक दिन भूचाल आया.... जब मनोज ने उसके घर की घंटी बजाई। उसकी मां ने दरवाजा खोला तो वह सीधा ही घर में आ गया और मीना के सामने खड़ा हो गया तो उसे देख वह भौचक्की–सी रह गई। मनोज की सारी हेकड़ी बैठ गई थी। जो गर्दन अकड़ी रहती थी, वह आज झुकी हुई थी। वह शान जो उसके कपड़े जो उसका गौरव थे वह एक दम सादा थे। शक्ल की सारी चमक गायब थी और एक सियाही सी फैल चुकी थी वहां। अब तो मीना की कनपट्टी पर भी थोड़ी सफेदी चमक रही थी, लेकिन उसकी शक्ल पर एक तेज था, आत्मविश्वास था जिससे उसकी शख्शियत को चार चांद लग रहे

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

थे। दोनों एक–दूसरे को देख कुछ हैरानी में पड़ गए थे। आखिर में मनोज ने ही चुप्पी तोड़ उससे उसके हालचाल पूछे। उसने भी सादा–सा जवाब दिया कि वह ठीक है। इतने में उसकी मां आई और उसने भी हाल पूछा। ऐसे काफी देर चला और मनोज असली मुद्दे पर आया और बोला की उसने जिससे शादी की थी, वह उसे छोड़कर चली गई थी और साथ में सारा बैंक बैलेंस ले गई। घर तो उसने पहले ही अपने नाम करवा लिया था तो अब न उसके पास घर था और न ही पैसा बचा था। बहुत परेशान था तो मीना से मिलने आ गया।

मीना भी काफी परिपक्व हो चुकी थी। अकेले ही दुनिया का सामना कर वह काफी समझदार भी हो गई थी। वह भावनावश हो कोई निर्णय नहीं लेना चाहती थी। उसने मनोज की और देखा और बोली कि उन दोनों के बीच में कोई मधुर संस्मरण नहीं थे। न ही कोई प्यार के चरम का इतिहास था। अगर कुछ था तो वह धोखा था। एक शरीफ घर की लड़की को अपनी बातों में उलझकर शादी करना और फिर विदेशी लड़की से प्यार के नाम पर उसके साथ रह अपनी ब्याहता के साथ सामाजिक, धार्मिक, भावनात्मक और मानसिक अपराध ही किया था मनोज ने। ये उसे स्पष्ट बता उसकी ओर से किसी किस्म का लगाव या हमदर्दी की अपेक्षा नहीं कर सकता था वह। मनोज बुत बनकर देख रहा था उसे और उसने अपनी मां से आवाज लगाकर चाय भेजने के लिए बोला।

लेकिन तब तक मनोज उठ खड़ा हुआ, गीली आंखों से एक संदेश दे रहा था कि वह बड़ी आस ले कर आया था उसके पास और अब जा रहा हैं मायूस होकर।

मीना ने तो अपने मन की बात बता ही दी थी। वह भी उठ खड़ी हुई मनोज को जाते हुए देख, स्वाभिमान से अपनी गर्दन ्ंची कर एक गौरवान्वित नजर से अपने सामने की दीवार पर टंगे आईने में अपने मुख को देख संतुष्टि का अनुभव कर रही थी।

ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

कहानी

बेटी की कमाई

सविता शर्मा 'अक्षजा'

"आज तो तुम बड़ा इतराकर बोल रही हो!"

"बात ही कुछ ऐसी है..."

"क्या बात है, तुम्हारी आवाज में मुझे तुम्हारी चूड़ियों की खनक और तुम्हारे पायल की छनक, दोनों लयबद्ध हो एक साथ सुनाई पड़ रही हैं, या फिर कि ये मेरा भ्रम मात्र है।"

"कुछ तो बात है..खुशी छुपाए थोड़ी छुपती है।"

"मुझे भी तो पता चले..!"

"आज दोपहर में दरवाजे की घंटी बजी, ...लगा कि इस समय में कौन ही आया होगा! रौनक से मैंने पूछा कि कुछ मंगाया था क्या! उसने नहीं मैं सिर्फ अपना सिर हिला दिया। 'दूध वाला आ चुका, ऑनलाइन कुछ भी मंगाया नहीं गया! तो आखिर दरवाजे पर है कौन?' भुनभुनाती हुई अलसाई–सी उबासी लेते हुए मैंने दरवाजा खोल दिया। देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ!"

"तुम्हारे मायके से था क्या कोई?"

"मेरे मायके से आते रहते हैं क्या ?" आवाज तीक्ष्ण हो गयी थी।

"कोई मेरी तरफ का रिश्तेदार !"

"अरे नहीं, इतनी दूर रिश्तेदारों का ऐसे ही बिना काम के आना सम्भव है क्या?"

"अच्छा..! इतनी खुशी कैसे..! फिर तो मेरे घर से आया होगा कोई?" व्यंग–पूर्वक कहकर कहकहा लगाया। जैसे मानते थे कि उनके घरवालों के आने से तो हम खुश नहीं ही होंगे।

"अब बिना कोई प्रश्न किए सुनो तो! तुम भी खुश हो जाओगे खबर सुनकर।"

"जल्दी बताओ...वरना...!"

"ये वरना कहकर तो तुम मेरी खुशियों को बाहर निकलने से पहले ही जैसे ताला मारकर बंद ही कर देते हो। खुशियाँ जब तक चुभला–चुभलाकर कर न बताई जाए, वे खुशियाँ कैसी भला।" कहकर मधु खिलखिलाने लगी।

"अहा, वही पुरानी वाली खिलखिलाहट। बिलकुल ऐसे ही मेरे सामने पहली बार तुम खिलखिलाकर तब हँसी थी, जब मैंने तुम्हें तुम्हारा बी.ए. का रिजल्ट दिखाया था।"

"कितने सपने पाल रखे थे मैंने। कुछ ससुराल की जिम्मेदारियों, तो कुछ बच्चों की परवरिश के कारण सपने हवा में तितली से उड़कर गायब ही हो गए। रत्ती भर जो बचा था, वह तुम्हारी इस पुलिस विभाग की नौकरी के भेंट चढ़ गया।" खिन्नता मन की खुशियों को झपटने को हुई।

उनके कहे वाक्य का सूत्र पकड़ यादों के तहखाने से आती झिर्रियों से, आँखें अतीत की ओर झाँकने लगी थीं कि फोन डिस्कनेक्ट हो गया। फोन कटते ही यादों का तारतम्य ही टूट गया।

"हाँ, जल्दी बताओ? किसने क्या भेजा था ?" फोन उठाते ही बड़ी जल्दबाजी में कहा गया।

"बड़ी क्युरेसिटी है, जानने की। तभी तो आप समय निकलते ही बार–बार फोन मिला ले रहे हैं, वरना तो.." इस बार वह व्यंग्य से खिलखिलाई थी।

"हाँ जानना तो है, तुम खुश हो तो कोई खास बात ही होगी।"

"डिलेवरी ब्याय था। मंत्रा के दो पैकेट पकड़ा गया था। मैंने सोचा मंगाया ही नहीं है कुछ, शायद यह गलती से आ गया। एक महीने पहले भी एक डिलवरी वाला 303 का पैकेट मुझे पकड़ा गया था। मुझे फिर उनकी वही गलती दुहराई–सी लगी थी।"

"नाम देखकर लेना था। बिना नाम देखे क्यों लिया ? और दरवाजा भी पूरा नहीं खोला करो किसी के लिए। आजकल लुटेरे तरह–तरह से बहाने मारकर घर में घुसने की कोशिश करते हैं।"

"ये पुलिसिया तहकीकात और हिदायतें देकर मुड खराब कर देते हो। खुशियों के गुब्बारे में कभी तो शक की सुई चुभोने से बाज

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

आया करो। बात किस मुड से कर रही थी, किन्तु तुमने तो मेरे मुड को लट्टू–सा नचा के रख दिया। हमेशा ऐसा ही करते हो। बात मैं कुछ करती हूँ और तुम अपनी ड्यूटी बजाने लगते हो।"

"अच्छा भई, अब ऐसा कुछ नहीं कहूँगा , बताओ जल्दी से।"

"नाम अच्छी तरह से देखा था मैंने। नेहा ही लिखा था। फिर भी मुझे डाउट हुआ। लगा वह तो किसी आर्डर का जिक्र मुझसे नहीं की। हो–न–हो ये पैकेट गलती से ही आए हैं। जाने किसने पेमेंट करके अपने नाम की जगह गलती से नेहा का नाम डाल दिया होगा।" फिर हँसते हुए बोली, 'जानते हो उसके एक दो दोस्त ऐसे ही गलती से अपने घर पिज्जा का आर्डर देकर उसका नाम डाल देते हैं। पिज्जा पाकर वह खाने के बाद अपने दोस्तों से फोन करके उसका जिक्र करती हुई खूब मजे लेती थी, तब पता चलता था कि वह तो उसकी बेस्ट फ्रेंड मेघा ने अपने लिए मंगाया था, लेकिन गलती से पता नेहा का ही सेव रह गया।" बताने के बाद मधु हँसते–हँसते लोटपोट होने लगी थी।

"तो गलती से आया पैकेट तुमने खोल भी लिया...?"

"फिर से ...तुमने कहा था न ऐसी बात नहीं कहोगे। तुम बाज नहीं आने वाले जानती हूँ। चौबीस घंटे ड्यूटी देते–देते वही सब दिमाग में नाचता रहता है, नहीं क्या!"

"लड़ने का समय नहीं है मधु...। बहुत काम है मुझे। बताती हो या...!"

सविता शर्मा 'अक्षजा'

प्रयागराज में पली–बढ़ी सविता मिश्रा 'अक्षजा' मूलतः गृहिणी हैं। लघुकथा, कहानी, व्यंग्य, छंदमुक्त कविता, पत्र, आलेख, समीक्षा, जापानी–विधा हाइकु–चोका आदि विधाओं में इनका सृजन सराहनीय हैं। इनकी रचनाएं विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र–पत्रिकाओं (प्रिंट एवं वेबसाइट) में प्रकाशित होती रहती हैं।

सम्पर्क : फ्लैट नंबर–302, हिल हॉउस, खंदारी अपार्टमेंट, खंदारी, आगरा
ई–मेल : 2012.savita.mishra@gmail.com
मोबाइल : 9411418621

"बताती हूँ, बताती हूँ..गलती से नहीं आया था। बूझिए तो किसने भेजा होगा..?"

"भई मैं तो नहीं भेज सकता हूँ। मुझे ऑनलाइन की खरीदारी आती ही नहीं है। इस मामले में मैं बिल्कुल ही अनाड़ी हूँ।"

"देना चाहो तो किसी से भी कहकर उसकी ऐप खुलवाकर पसंद करके, उसी से कहकर ऑर्डर करवा सकते हो।"

"हाँ करवा तो सकता हूं, पर तुम तो जानती हो कि मेरे पास मरने तक की फुर्सत नहीं होती है।"

"हाँ, हाँ, जानती हूँ। इसीलिए तो 35 साल से चुप हूँ। गिफ्ट किस चिड़िया का नाम है, तुमसे तो नहीं ही जाना मैंने। शादी से बीस साल तक तो दूर ही रही उपहार मिलने की खुशी से। वह तो बच्चे बड़े हो गए तो सालगिरह पर गिफ्ट देकर खुश करते रहे। सच में ये गिफ्ट पाने का अहसास चेहरे पर बंद बत्तीसी को खोलता ही नहीं है, बल्कि चेहरे के .पर चस्पा कर देता है।"

"हाँ, मैं भी साफ–साफ देख पा रहा हूँ तुम्हारी बत्तीसी।"

"तुम्हें क्या, आज मेरी स्थिति देखकर दुश्मनों को भी भनक लग जाती कि कोई खास खुशी पहुंची है मुझ तक।"

"तुम बताने वाली क्या थी, और क्या–क्या जताने लगी हो।"

"तुम ही ने तो अपना जिक्र कर दिया।"

"अच्छा तो तुम्हारे भाइयों ने भेजा था क्या! क्या भेजा ? मैं भी तो सुनूँ।"

"नहीं भई, भाइयों ने नहीं भेजा। भाइयों पर भौजाईयों का शासन है। रक्षाबंधन पर ही कुछ भेज दें, तो गनीमत समझो।"

"पहेलियाँ न बुझाओ, अब बता भी दो!"

"तुम्हारी बिटिया ने भेजा है। अपनी पहली सैलरी से।"

"अच्छा उसने भेजा! लेकिन...!"

"अच्छी तरह मालूम है तुम्हारे इस लेकिन का मतलब मुझे।

"मालूम है तो फिर उसे समझाना चाहिए था न! तुम हो कि उससे उसी की कमाई के रुपयों से गिफ्ट पाकर खुश हो!"

"किस दुनिया में जी रहे हो जनाब! आज की दुनिया कल की दुनिया नहीं रह गई है। अब तो हमारे पुरोधाओं वाला जमाना उनकी किताबों में ही मिलेगा। तुम क्या चाहते हो कि मैं बिटिया से कहकर, 'बिटिया, तू मुझे और अपने पापा को भेजा गिफ्ट वापस कर

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

दे, मैं तेरी कमाई का ये गिफ्ट नहीं ले सकती हूँ' उसका दिल तोड़ दूँ, क्षण भर में उसे 'तू पराया है जतला दूँ'! तुम भी न..!"

"मगर मैं तो उन्हीं पुरोधाओं के बीच में मिलने वाला किरदार हूँ। और तुम्हारी इस बदली हुई दुनिया में ही खड़ा हूँ।"

"हाँ हो तो खड़े, और खड़े–खड़े बस देखते रहो इस बदलती दुनिया को। क्योंकि मैं खुद तुम्हारी इस दकियानूसी सोच को लागू करने में दीवार बनकर खड़ी हूँ। इन घिसीपिटी परंपराओं की लीक पर तो नहीं ही चलने दूंगी तुम्हें जिससे कि मेरे बच्चे प्रभावित हों।"

"वो दीवार जो एक हाथ लगाने भर से ढह जाएगी।" कहकर हँस पड़े।

"तुम भूल रहे हो जनाब! अब मैं इतनी कमजोर नहीं हूँ, जितनी पहले थी। वैसे आपकी जानकारी के लिए बता दूं कि मैं पहले भी कमजोर नहीं थी। बस मां के सिखाएं रास्ते पर चलने की कोशिश कर रही थी। यूं कहो कि रिश्ते निभाने की कोशिश में अपने क्रांतिकारी विचारों की गठरी बांधकर सहेजती जा रही थी। समय बीतते–बीतते अब मेरे साथ–साथ वह गठरी भी खुल गई है।"

"तुम तो खुशी के समुद्र में गोते लगा रही थी। ये अचानक से सीधी–सादी बेचारी मछली से व्हेल कैसे बन गई भई! शांत हो जाओ देवी! शांत...!"

"क्रोध तो तुमने ही दिलाया।"

"अच्छा बताओ तो बिटिया ने अपनी पहली कमाई से तुमको क्या भेजा?"

मधु बताने ही जा रही थी कि फोन फिर से डिस्कनेक्ट हो गया। फोन की रिंग पुनः बजी। उठाते ही उधर से आवाज आई,

"इससे पहले कि व्यस्तता के कारण फोन काटना पड़ जाए और मैं पांचवी बार फोन करूं! बताओ तो क्या गिफ्ट दिया उसने?"

"जैसे ही पैकेट खोला तो अपने लिए एक कुर्ती देखकर आश्चर्य हुआ। लगा कि इस तरह की कुर्ती तो अमेजान पर मैंने कभी पसंद की थी, मेरी पसंद वह कैसे ताड़ गयी। और जानते हो उसने दोनों भाइयों को भी टी–शर्ट गिफ्ट में भेजा था। आपके लिए भी कुछ भेजा है उसने! वह कल आएगा।"

"परन्तु मेरे लिए क्यों...!"

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

"अरे जनाब लेकिन–वेकिन को मारिए गोली। बच्चों की खुशी के तरंग के संग–संग खुद भी ढलिए और समय के साथ रंगते चलिए। आज का जमाना बिटिया को भी अपनी संतान मानने का जमाना है। जब बेटे की कमाई से कोई दुराव नहीं तो फिर बिटिया की कमाई से आखिर क्यों! अब उन पुरानी परंपराओं को तोड़ने का जमाना आ गया है। जो अपनी ही संतानों में भेद करना सिखाती हैं।"

"कहती तो ठीक ही हो, अब पुरानी परंपराओं को इस नये जमाने के अनुसार निभाना भी बड़ा मुश्किल है।"

"मैं तो हमेशा से ही ठीक कहती आई हूँ। तुम ही हो की परंपराओं के खजूर पर चढ़े रहना चाहते हो! धरातल पर उतरो जनाब। मैंने आपके इसी नम्बर वाले व्हाट्सएप पर उस कुर्ती को पहनकर अपनी तस्वीर भेजी है। जरा देखकर बताओ तो ..!"

"रुको ..! बहुत सुंदर है। सच में गोद में खेलने वाली बिटिया कितनी जल्दी बड़े होने के साथ सयानी भी हो गई। और उसके दिए उपहार को पहनकर तो तुम्हारे चेहरे पर गर्व छलक आया है।"

"हो भी क्यों ना, आखिर बिटिया की पहली आमदनी का पहला उपहार जो है।"

"उसे पापा का प्यार कहना...!" थोड़ी देर रुककर ... "नहीं तुम रहने दो, उसे फोन करके मैं खुद ही कहूँगा।"

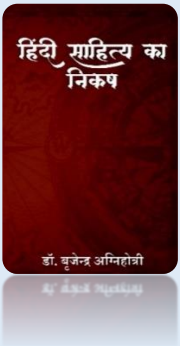

हिंदी साहित्य का निकष

डॉ. बृजेन्द्र अग्निहोत्री

आईएसबीएन : 978-93-90548-81-1

संस्करण : 2020, मूल्य : 299/-

कहानी

स्मृति-ध्वंस

पीयूष कुमार

‘आओ, आज तुम्हें अपना शहर दिखाऊं।’ मैंने कहा।

‘अरे, लेट हो जाएँगे।’ उसने कहा।

‘अरे, आओ! गाड़ी शाम को है। अभी बहुत समय है।’ मैंने उसे सान्त्वना दी।

हम लोग मेन रोड से स्टेशन जाने वाली दायीं रोड पर आ गए थे। थोड़ी उमस थी। बारिश के आसार थे। थोड़ी दूर चलने पर सब्जी मंडी शुरू हो जाती है। आज कुछ ज्यादा ही भीड़भाड़ दिख रही है। अच्छा! आज वृहस्पतिवार है, आज बाजार का दिन है, इसीलिए इतनी भीड़ है।

‘पता है, मेरे चार साल इन्हीं सड़कों पर आते–जाते बीते हैं।’ मैंने भावुक होते हुए कहा।

‘भाई साहब, ई–रिक्शा कर लीजिए। कहीं थक न जाएं।’ उसने चिन्ता जाहिर की।

‘बहुत दूर नहीं है, चलते रहो। आगे मेरा हॉस्टल है, उसे भी दिखाता चलूँगा।’ मैंने उसे प्रलोभन दिया।

दरअसल मैं खुद पल भर के लिए अतीत को जी लेना चाहता था। एक बार फिर उन जगहों, गलियों और दुकानों को जी भरकर देख लेना चाहता था। आज इतने दिनों बाद अपने इस शहर आना हुआ है। सबकुछ कितना बदल गया है। पहले की तुलना में रोड कुछ और चौड़ी हो गयी है। और जहाँ–जहाँ से कोई गली या रोड मुड़ती थी, वहाँ भी रोड कुछ चौड़ी हो गयी है। जहाँ कभी खाली जगह थी,

ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

वहाँ अब मॉलनुमा कई दुकानें खुल गयीं थी। पहले की तरह फुटपाथ पर अब चप्पल–जूतों और कपड़ों का मेला भी नहीं दिख रहा था बल्कि अब वहाँ उस जगह पर दुकानों के भीतर चमचमाते काँच से वुडलैंड, रिबॉक, लैंसर, रेडचीफ, स्पार्की और मांटकार्लो आदि देशी–विदेशी कंपनियों के जूते और कपड़े झलक रहे थे।

दाहिनी ओर जहाँ दही–जलेबी और एक रुपये का समोसा मिलता था, वहाँ काँच से लैस बहुत बड़ा रेस्टोरेंट खुल गया था। वहाँ अब दस रुपये का एक समोसा मिलने लगा है। थोड़ा आगे चलने पर एक नाला मिलता था। उसके .पर बने पुल के दोनों ओर लोहे की जालीदार चादर लगा दी गयी थी, ताकि हवा भी आती रहे और लोग गिरने से भी बच जाएँ। आगे नुक्कड़ पर पाँच रुपये के पाँच गोलगप्पे खिलाने वाला भी गायब था। पास की दुकान वाले से पूछने पर पता चला कि नगर निगम वालों ने उसे भगा दिया है। अच्छा! तो अपना शहर भी विकसित हो रहा है। वही तो मैं सोच रहा था कि खीरा–ककड़ी, मुरमुरा, गोलगप्पे और शरबत बेचने वाली ठेलिया ज्यादा क्यों नहीं दिख रही हैं! विकसित शहरों में बड़े–बड़े मॉल्स को ही अपना व्यापार करने की इजाजत है। नाले पर बने पुल को पार करते ही बायीं ओर स्टेशनरी की एक अस्तव्यस्त एक छोटी–सी दुकान हुआ करती थी, जिसमें सारा सामान बिखरा हुआ पड़ा रहता था। अब देख रहा हूँ कि उस जगह दो दुकानों को मिलाकर एक बड़ी–सी स्टेशनरी की दुकान का विस्तार हो गया था। इसमें भी आधे में काँच लगा था, जिस पर से कॉपी–किताबें, पेन–पेंसिल, मानचित्र, चार्ट, कलरबॉक्स, रंग–बिरंगे एग्जाम पैड और भी न जाने कितने सामान करीने से सजे हुए रखे थे। जगह–जगह काँच की संस्कृति थी। रिश्ते भी इन्हीं काँच की तरह हो गए हैं, जरा सा धक्का लगते ही चूर हो जाते हैं और उनका दोबारा जुड़ना नामुमकिन–सा हो जाता है।

‘देखो बालक, ये आई.टी.आई. ग्राउंड है। इसमें हम लोग फुटबॉल, क्रिकेट और बैडमिंटन खेला करते थे।’ मैंने उससे कहा।

‘चलते रहिए भाई साहब, धूप लग रही है।’ उसने आसमान की ओर देखते हुए कहा।

‘अरे भई, हवा भी तो चल रही है। इतनी भी गर्मी नहीं लग रही है।’ मैंने उसे ढाढस बँधाया।

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

उसने अपने जेब से मोबाइल निकाला, समय देखा और पुनः मोबाइल को जेब में रख लिया। हम चलते रहे। इसी बीच वह मेस मेन्यू और खाने–पीने के बारे में पूछता रहा। मैं हॉस्टल में मिलने वाले खाने और नाश्ते के बारे में बताता रहा। सुबह बस से कॉलेज जाना और वापस आना। उसने फिर फीस के बारे में पूछा तो मैंने उस समय की फीस उसे बता दी जब मैं यहाँ रहता था। फिर उसने इस समय की फीस को लेकर जब जिज्ञासा जाहिर की तो मेरी आँखों में चमक आ गयी। मैंने कहा, 'इस समय तो पता नहीं इतनी होगी! आओ चलकर पता कर लेते हैं।' हालाँकि मैं हॉस्टल जाने के बारे में पहले से हो सोचकर आया था। कोई बहाना न भी मिलता तो भी जाता। पर अब तो संयोग से बहाना मिल गया था।

बात करते–करते हम लोग हॉस्टल के करीब पहुँच गए। बीच में दीवार थी और दोनों ओर किनारों पर लोहे के बड़े–बड़े गेट थे, जिनसे होकर कार आराम से अंदर आ सकती थी। गेट से घुसने पर आगे थोड़ा खुला हुआ मैदान था। मैदान क्या वह पार्किंग ही थी। सामने बीचोबीच सीढ़ियां बनी हुई थीं। गेट पर पहुँचते ही .पर देखकर तीसरी मंजिल की ओर उँगली उठाते हुए मैंने कहा, 'देखो, वहीं रहते थे हम लोग।'

'तो यहाँ से उस ग्राउंड तक आप लोग पैदल जाते रहे होंगे खेलने?' उसने सवाल किया।

'नहीं, अंबानी हेलीकॉप्टर भिजवाते थे।' मैंने चुटकी ली।

हम लोग गेट से प्रवेश कर रहे थे। उसने .पर की ओर देखा और उसके मुँह से फुट पड़ा, 'ओ तेरी की, आपके हॉस्टल में लड़कियाँ भी रहती थीं क्या? इतनी गोरी–गोरी, इतनी सुंदर–सुंदर!'

मैंने कहा, 'हॉस्टल की तो बात छोड़ो, जीवन में नहीं थीं। अभी तुम्हारी शादी नहीं हुई है न, इसीलिए तुम्हें हर जगह लड़कियाँ ही लड़कियाँ दिखाई देती हैं। बहरहाल ये बताओ तुम्हें दिखी कहाँ?'

उसने .पर इशारा किया, दूसरे मंजिल की तरफ। मैंने इसे बताया कि हमारा हॉस्टल किराए की बिल्डिंग पर था। तीसरी मंजिल पर हम लोग रहते थे। बाकी पहली और दूसरी मंजिल में बैंक और अन्य चीजों का कारोबार होता था। उसने जो लड़की देखी थी, वो बैंक की कोई कर्मचारी या ग्राहक रही होगी।

पीयूष कुमार

जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय के हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग में शोधरत पीयूष कुमार सुधी पाठक और सजग रचनाकार हैं।

ईमेल : piyush77agrahari@gmail.com
मो.नं. 9628502509

हम लोग सीढ़ियाँ चढ़ने लगे। मैंने उसे समझा दिया कि कहना उसे अपने छोटे भाई का एडमिशन करवाना है। इस पर उसने कहा कि वह तो अपने माता–पिता की इकलौती संतान है। मैंने उसे हरिश्चंद्र न बनने की सलाह दी। अपने मोटे और थुलथुल शरीर के कारण वह सीढ़ियाँ चलते–चलते हाँफने लगा था। मैंने उसे बताया कि हम लोग उस समय दिन में कभी–कभी तो छह–छह बार इतनी ही सीढ़ियाँ चढ़ते–उतरते थे। हालाँकि सच्चाई यह थी कि उसी की तरह मैं भी उस समय हाँफने लगा था। आज समझ में आ रहा था कि हम लोग उस समय कितनी भागदौड़ करते थे, पता नहीं चलता था।

सीढ़ियाँ समाप्त होते ही आसमानी रंग से पुता हुआ लकड़ी का दरवाजा था। दरवाजा खुला था और संयोग से वह खड़ूस गेटकीपर शर्मा नहीं था। उसकी घ्राण शक्ति कुत्ते से भी ज्यादा तेज थी और आँखें तो पूरी 'स्कैनर' थीं जो झोले के भीतर तक की चीजों को स्कैन कर लेती थीं। मजाल है कि कोई लड़का किसी भी प्रकार की अवैध सामग्री अपने बैग में भरकर अंदर घुस जाए। हम लोग गेट से दाखिल हुए। सामने तकरीबन बीस–पच्चीस फीट की दूरी के बाद तीन कमरे बने थे। बायीं तरफ पंद्रह–बीस बिस्तरों का बड़ा–सा हॉलनुमा कमरा था। बीच वाला कमरा छोटा ही था, जिसमें छह–सात बिस्तर ही लगे थे। बाएं वाले कमरे से सटी हुई लंबी पतली गैलरी थी, जिसके समाप्त होते ही खूब लंबी–चौड़ी छत थी, जिस पर आराम से बैडमिंटन खेला जा सकता था। उसी के आगे मेस थी और मेस से सटे हुए दो छोटे–छोटे कमरे थे, जो वार्डन के अस्थाई कक्ष थे।

सीढ़ियों से सटा हुआ वार्डन का ऑफिस था। उसके भीतर वार्डन की आरामदायक कुर्सी और सामने बड़ी–सी काँच की मेज थी। अतिथियों के बैठने के लिए सामने और बगल में लकड़ी की गद्देदार

सीट्स थीं। ऑफिस की फर्श पर हरे रंग की कारपेट बिछी थी। सीढ़ियाँ चढ़कर हम दोनों वार्डन के ऑफिस की ओर मुड़े। वार्डन ने मुझे देखते ही कहा, 'आओ, आओ लवलेश बेटा, कैसे हो? बड़े दिनों बाद आना हुआ।'

'जी सर, जा रहे थे दिल्ली। गाड़ी शाम को है तो सोचा हॉस्टल घूम आएं।' मैंने कहा।

'अच्छा किया। आते रहना चाहिए। आप लोग तो यहाँ के अच्छे स्टूडेंट्स में थे।' वार्डन ने खुशी जाहिर की। मैंने अपने साथी का उनसे परिचय करवाया। उसने भी अभिवादन किया। वार्डन के ऑफिस के बाहर तीन–चार बच्चे हॉस्टल के कर्मचारी किसी काम के सिलसिले में मिलने के लिए खड़े थे। सोशल डिस्टेंसिंग का औपचारिक पालन हो रहा था। दरवाजे से लगी हुई दीवार से सटी हुई मेज पर, जिसमें टेलीफोन रखा होता था, बड़ी–सी सेनेटाइजर की एक बोतल रखी थी, जिससे हाथ साफ करने सब लोग अंदर जाते थे। हमने भी हाथों को अच्छी तरह सेनेटाइज किया। हालाँकि कोरोना का कहर धीरे–धीरे कम हो रहा था, लेकिन हर जगह सावधानियाँ अब भी बरती जा रहीं थी। पता नहीं यह कोरोना 'अतिथि तुम कब जाओगे' के परेश रावल की तरह जाते–जाते चला आए और अमरीश पुरी की तरह मरते–मरते कितनों को मारके जाए।

'तो और बताओ लवलेश बेटा, कहाँ हो इस समय?' वार्डन ने जिज्ञासा व्यक्त की।

'सर, बेंगलौर में हूँ इस समय। घर आया था। अभी तक तो वर्क फ्रॉम होम चल रहा था।' अपने साथी की ओर इशारा करते हुए मैंने कहा, 'इनके साथ दिल्ली जा रहा हूँ, फिर दिल्ली से फ्लाइट है।'

मेरा साथी इस बीच 'अमर उजाला' पलटने लगा था।

'अरे, बहुत दूर निकल गए। यहीं कहीं दिल्ली, नोयडा में ही कोई कंपनी ज्वाइन कर लेते। अच्छा, तुमने प्राइवेट बी. टेक. किया था न? आई. आई. टी. में नहीं हुआ था न तुम्हारा?' वार्डन ने पूछा। 'जी सर!' धीरे–से कहा मैंने। और भला मैं क्या कहता उनसे? कहने को तो कह सकता था कि जब गाँव के पास वाला कॉलेज छोड़कर यहाँ शहर आया तो आपने क्यों नहीं कहा था कि गाँव छोड़कर यहाँ इतनी दूर क्यों चले आए। तब मेरे मन में भी इंजीनियर बनने का सपना पलने लगा था। नाइंटी और इक्कीसवीं सदी के पहले दशक

के मध्यवर्गीय माँ–बाप की तरह मेरे पापा भी मुझे इंजीनियर और छोटे भाई को डॉक्टर बनाना चाहते थे। और बना भी दिया। पर चाहते हुए भी सभी नहीं बन पाते। ज्यादातर हर लड़के की अभिरुचि उसे पैतृक कारोबार की ओर होती है। उसने बचपन से उस काम को घर–बाहर होते–करते देखा होता है। लेकिन ऐसा नहीं है कि सभी इस प्रकार सोचते और करते हैं। मेरे पिताजी इलेक्ट्रिशियन थे। तार, बल्ब, होल्डर, मोटर, पेचकस, प्लास, टेस्टर, क्लिप और कइया आदि सामान बचपन से ही मेरे लिए खिलौने जैसे थे। बचपन से ही इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में मेरी खासी दिलचस्पी थी। रेडियो, टॉर्च और बिगड़े हुए पंखे खोल–खोलकर बड़ी बारीकी से उसे देखा करता था। इसके अलावा गाँव में क्रिकेट बहुत खेलता था। दिन–दिन भर बिना नहाए–धोए और खाए–पिए खेलता रहता था। नहाने–खाने की कोई सुध नहीं रहती थी। इसी चलते मम्मी से कई बार पिटा भी हूँ। पापा ने तो कभी हाथ नहीं उठाया। पापा का मुझे पर और मम्मी का छोटे भाई पर अधिक स्नेह था। हालाँकि माँ–बाप अपने सभी बच्चों को समान रूप से चाहते–मानते थे, लेकिन उस समय हम दोनों भाइयों को इस प्रकार का वहम था। चूँकि हमारी कोई बहन नहीं थी, इसलिए पास–पड़ोस के लोगों और दोस्तों की कलाइयों में राखी बंधी देखता था तो मैं भी मम्मी के पास जाकर रोता था और राखी बंधवाने की जिद करता था। मम्मी फिर छोटे भाई को फ्रॉक पहनाकर मुझे राखी बंधवा देती थीं और मैं खुश हो जाता था। उस वक्त कलाई में बंधी राखी दुनिया की सबसे सुंदर और कीमती चीज लगती।

मम्मी मुझे इतना चाहती हैं, मुझे इस बात का अहसास उस दिन हुआ जब 10 जुलाई, दिन वृहस्पतिवार को वो पापा और छोटे भाई के साथ हॉस्टल में मेरा दाखिला करवाने आयीं थी। मुझे छोड़कर वो इन्हीं सीढ़ियों से उतरते हुए बार–बार रूमाल से अपने आँसू पोछते हुए जा रहीं थी। .पर छज्जे पर खड़ा मैं उनके बाहर आने की प्रतीक्षा कर रहा था। सीढ़ियाँ उतरकर वो कार में बैठ चुकीं थी। छोटे भाई ने .पर देखा तो मम्मी को बताया। मम्मी ने कार के दरवाजे का शीशा जल्दी–जल्दी नीचे किया और उसके बाहर हाथ हिलाकर खूब रोने लगीं। ड्राइवर ने गाड़ी स्टार्ट कर दी थी, लेकिन वो मुड़–मुड़कर पीछे देखे जा रहीं थी। .पर छज्जे पर खड़ा मैं भी रोते जा रहा था। वह दृश्य मैं कभी भूल नहीं पाया।

शुरू—शुरू तो महीने डेढ़ महीने हॉस्टल में रोते—रोते ही बीते थे। मेरे कमरे में दस—बारह लड़के थे। सभी को एक—एक तखत, बिस्तर और मेज मिले हुए थे। बाकी सामान घर या बाजार से लाना था। उस कमरे में घर की याद करके कोई एक लड़का रोने लगता था तो उसी की देखादेखी फिर कुछेक को छोड़कर लगभग सभी रोने लगते थे। तब वार्डन आकर सबको समझाते थे। फिर धीरे—धीरे सब रोना बंद कर देते थे। मैं भी रोता था, पर सबके सामने नहीं। रात में जब कमरे की सारी लाइट्स बंद हो जातीं थी तब। अपने बेड के ठीक .पर वाला पंखा देखता रहता था और रोता रहता था।

हॉस्टल की दिनचर्या एकरस थी। चाहे ठंडी हो या गर्मी, सुबह—सुबह चार सवा चार बजे गेटकीपर शर्मा सभी को जगा देता था। सभी बच्चे ब्रश—मंजन और साबुनदानी लेकर बाथरूम की ओर कूच करते थे। शौचालय और बाथरूम में लाइन लगती थी। कारण कि लगभग सत्तर बच्चों के बीच में चार बाथरूम और चार शौचालय थे। नहा धोकर सभी चाय पीकर अपने बिस्तर पर आकर सो जाते। जिनकी सुबह पाँच बजे कोचिंग होती उनकी मजबूरी थी। पाँच साढ़े पाँच बजे डंडा लेकर वार्डन की एंट्री दबे पांव होती। और जो—जो भी सोया हुआ पाया जाता, डंडा उसके पुट्ठे पर चपककर पड़ता था और वह बड़ी फुर्ती से किताब खोलकर बैठ जाता। कुछ बच्चे तो बगल में ही किताब रखकर अध्ययन और शयन दोनों कर लेते थे। एक लड़का तो आँख खोले—खोले हो सो लेता था। पहले तो मुझे भी विश्वास नहीं हुआ लेकिन जब उसे खुद देखा तो यकीन हो गया। बड़े ब्रिलियंट और ऑलराउंडर लड़के थे हॉस्टल के। डंडों से बचने के लिए लड़कों ने एक उपाय ईजाद किया था। ठंडी के दिनों में वार्डन रजाई उघाड़—उघाड़ कर जगाया करते थे। वैसे भी जाड़ों में रजाई और लुगाई बड़ी प्यारी लगती हैं और .पर से ये तूफानी उम्र। तो हुआ ये कि उस कमरे के एक—दो लड़कों ने रात में पूर्णतः निःवस्त्र सोना शुरू कर दिया। एक दिन वार्डन ने उनकी रजाई उघाड़ी तो 'राम—राम' कमरे हुए कमरे से बाहर आ गए। बहरहाल इसके बाद उन्होंने लड़कों को जगाने के इस रजाई—उघाड़ अभियान को स्थगित कर दिया और कमरे के दरवाजे पर ही अपना डंडा पीटकर संतोष कर लेते।

भोर की चाय पीने और सुबह का खाना खाने के बाद सभी लड़के बस से कॉलेज जाते और वापस आकर सांझ का नाश्ता करते।

रोज जाते और वापस आते समय गेटकीपर शर्मा सभी की गिनती करता। रात में सभी एक साथ बैठकर खाना खाते। मेस में एक साथ छत्तीस लड़के ही खा सकते थे। इतनी ही जगह और इतनी ही कुर्सियां थीं। चाय, खाना और नाश्ता दो शिफ्टों में होता था। महाराज सभी बच्चों को आवाज लगाने जाता था। रात में काँच के एक गिलास में सभी को गुनगुना (कभी–कभी तो गर्म) दूध मिलता था। वैसे तो गुरुवार का दिन मटर–पनीर और रविवार का दिन छोला–पूड़ी के लिए नियत था। लेकिन मिल जाए तो अहोभाग्य! मटर–पनीर वाले दिन तो मटर अधिक और पनीर की जगह आलू का स्वाद भी मिलता था। खैर बाद में पता चला कुछ को छोड़कर हिन्दुस्तान के लगभग सभी छात्रावासों का यही हाल है। संडे की सुबह खेलने जाने के लिए और शाम टीवी देखने के लिए निश्चित थी लेकिन उसके लिए भी हर संडे वार्डन की परमिशन लेनी पड़ती थी। इसे लड़के 'तेल लगाना' कहते थे। पिछले संडे जो लड़का तेल लगा चुका होता अगले संडे वह मुक्त रहता। किसी एक लड़के के नेतृत्व में चार–पाँच लड़के पीछे होते। कभी तो परमिशन मिल जाती और कभी तो 'पढ़ो बैठकर चुपचाप, नहीं जाना खेलने–वेलने' सुनकर लड़के बुझे मन से अपने छः बाई तीन के बिस्तर पर आकर बैठ जाते और पानी पीकर पूरे मनोयोग से वार्डन को खूब गरियाते। जिसको जिनती गालियाँ आतीं थीं, वो सभी एक स्वर देते थे। जिनको गालियाँ नहीं आतीं थीं, उनके सीखने के लिए यह परिवेश 'उपयुक्त' था।

कभी–कभी मुझे वार्डन के रवैये पर अफसोस होता था। देश के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय से दो–दो विषयों में एम. ए. थे। बीएड और एमएड दोनों कर रखा था। लेकिन उनके वही संस्कार थे जो बच्चों को किताबी कीड़ा बनाने के पक्ष में रहते हैं और यह मानकर चलते हैं कि 'पढ़ोगे लिखोगे तो होगे नवाब, खेलोगे कूदोगे तो बनोगे नवाब।' पर बच्चों की अपनी फिलॉसफी थी। वह कहते, 'पढ़े लिखे से कुछ न होई, हर जोते से बेर्रा होई।' इसके अलावा मुझे उनकी एक बात यह भी नहीं समझ आती थी कि वो बच्चों को अखबार क्यों नहीं पढ़ने देते थे? इसके पीछे न जाने क्या तर्क था! एकबार तो उनके रवैये पर मेरे साथ–साथ सभी लड़कों को आश्चर्य हुआ। दरअसल हुआ यह था कि एक लड़के ने दफ्ती, कागज और थर्माकोल आदि से एक हवाईजहाजनुमा उड़ने वाली गाड़ी बनायी थी। थर्माकोल

को काटकर उसकी पंखी बनायी थी और गत्ते के भीतर मोटर रखकर दो छोटी–छोटी बैटरी रखकर उसे तार से जोड़ दिया था। उस लड़के ने अपने पैसे से सारा सामान खरीदा था। वह बाहर बाजार जाता था तो चुपके से जरूरत का सामान ले आता था। हॉस्टल से बाहर जाने पर एप्लिकेशन लिखना पड़ता था और रजिस्टर पर आने–जाने का समय व जाने का कारण भी लिखना पड़ता था। रजिस्टर पर बिना एंट्री किए गेटकीपर शर्मा किसी को बाहर नहीं जाने देता था। वह बड़ा ही सख्त, अड़ियल और तुनुकमिजाज था। कई लड़के उसके गुप्तचर थे जो लड़कों की गुप्त सूचनाएँ उसको देते थे कि कौन लड़का वार्डन और उसको गाली देता है, कौन खैनी खाता है और किसके पास मोबाइल है। और भी तमाम सूचनाएँ थीं। उन्हीं गुप्तचरों में से किसी ने मुखबिरी कर दी और बात वार्डन तक पहुँच गयी। हम लोगों ने सोचा था कि उस लड़के के द्वारा बनाए गए उस जहाज को देखकर वार्डन प्रसन्न होंगे और यह बात प्रिंसिपल तक पहुँचाएँ तो शायद उस लड़के को 26 जनवरी को पुरस्कृत कर उसका हौसला बढ़ाया जाएगा। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। उल्टे वार्डन ने उस लड़के को काफी देर तक मुर्गा बनाए रखा और उसी के सामने ही शर्मा ने उसकी कई दिनों की मेहनत पर पानी फेर दिया। उसने जहाज के सारे पुर्जों को चूर–चूर कर डाला और कुछ चीजें जब्त करके बाकी चीजों को डस्टबिन के हवाले कर दिया। उस लड़के ने उस दिन खाना नहीं खाया था और रोया भी था खूब। सभी को बहुत बुरा लगा था लेकिन सभी किंकर्तव्यविमूढ़ थे। कभी–कभी लगता था कि ऐसे जगहें तो प्रतिभाओं को निखारने के लिए होती हैं पर यहाँ तो प्रतिभाओं को कुंद किया जा रहा था।

इस घटना की प्रतिक्रिया और मेसमेन्यू की अनियमितता को लेकर लड़कों ने अगले दिन भूख हड़ताल की। हालाँकि इसका नाम भूख हड़ताल नहीं रखा गया। आपसी सहमति से सबने योजना बनायी कि आज कोई खाना नहीं खाएगा। लेकिन अठारह सौ सत्तावन की क्रान्ति की तरह इसमें भी चूक हो गयी। सभी कमरों तक यह बात पहुँच नहीं पायी और लगभग एक तिहाई बच्चों ने भोजन कर लिया था। महाराज ने वार्डन को बच्चों के खाना न खाने की बात बता दी। वार्डन ने खाना न खाए सभी लड़कों को बुलाया और मुर्गा बनने का आदेश दिया। लड़कों ने इनकार कर दिया। वार्डन का पारा हाई हो

गया। उन्होंने ॅ.ची आवाज में गुर्राते हुए शर्मा से कहा, 'शर्मा, ए शर्मा, मेरी लाठी लाओ। एक तो साले सुअड़ खाना नहीं खाएँगे और .पर से नेता बनेंगे। कल बुलाता हूँ सबके घर वालों को और कहता हूँ ले जाओ इन्हें घर। हम नहीं रख पाएँगे इन्हें।' जिस लड़के ने पहले मुर्गा बनने से इनकार किया था उसी ने कहा, 'हाँ, बुलाइए! हम भी बताएँगे।' कोई जबान दोहराए, वार्डन को कतई बर्दाश्त नहीं होता था। उस लड़के की इस बात से वो बिफर पड़े, 'क्या बताएगा, अएँ क्या बताएगा?' वार्डन का आज्ञाकारी शर्मा अब तक लाठी लेकर आ गया था। वार्डन ने उस लड़के पर दो–तीन बार लाठी बरसायी। उन्होंने बाकी लड़कों पर भी लाठी उठाई तो सभी दौड़ते हुए अपने–अपने कमरों में भाग गए।

ताली एक हाथ से नहीं बजती। लड़के भी कम नहीं थे। उन्हें जिस काम के लिए मना किया जाता, उसे वो जरूर करते। ये तो बच्चों का स्वभाव हो होता है। उन्हें हॉस्टल में मोबाइल रखने के लिए मना किया जाता लेकिन वो चोरी–छिपे मोबाइल रखते और रजाई के नीचे मुँह छिपाकर रात–रात भर पोर्न देखते। उन्हें नशे से दूर रहने की हिदायत दी जाती तो वे कमला पसंद, दिलबाग, राजश्री, रजनीगंधा, केसर और बियर आदि का सेवन करते। इन सामग्रियों को खरीदने के लिए वो सबके सो जाने के बाद तिमंजले से कूद–फाँदकर न जाने कैसे बाहर निकल जाते। एकबार तो एक लड़का पकड़ा भी गया था। उसे हॉस्टल से निकाल गया था लेकिन घर वालों की मान–मनौव्वल और माफी माँगने के बाद उसकी पुनः वापसी हो गयी थी। इसके अलावा जिस गुरुवार को भोजन पनीर न मिलती, लड़के शौचालय में रखे मगों में पेशाब कर देते और सुबह वार्डन की गालियाँ सुनते। जिस रविवार को टीवी न दिखाई जाती, उस रात पानी वाला पाइप ब्लेड से काट दिया जाता। और इन सब कारनामों का घोर शत्रु था गेटकीपर शर्मा। उसके गुप्तचरों और दो–तीन लड़कों को छोड़कर किसी से नहीं बनती थी। उसके गुप्तचरों के बारे में किसी को पता नहीं चल पाता था। वे लड़कों के बीच रहते और मुखबिरी करते रहते थे। गुप्तचरों के अलावा दो–तीन लड़कों में से दो तो उसके दूर–दराज के भाई थे, जो शर्मा भइया की बुराई नहीं सुन सकते थे। और एक था हम लोगों का साथी, जिसे हम सब 'चाणक्य' कहकर बुलाते थे। चाणक्य शान्त मिजाज का सीधा–सादा

लड़का था। उसे पढ़ने–लिखने के अलावा और किसी चीज से मतलब नहीं था। बात–बात में वह दोहे बोलता था और कुछ–कुछ नीतिपरक बातें भी करता था, अतएव सभी लोग उसे चाणक्य कहने लगे थे। एक कारण यह भी था कि उसे भी शर्मा की तरह कहानी–उपन्यास पढ़ने का शौक था। शर्मा अपने लिए जो किताब लाता था, वह उसे चाणक्य को भी पढ़ने के लिए देता था।

इन सभी तनावों और तनातनी के बावजूद लड़के हँसते–मुस्कुराते रहते थे। एक–दूसरे से हँसी–मजाक और गप्पेबाजी भी खूब करते। हॉस्टल में उस समय चोरियाँ भी होने लगीं थी। किसी के पैसे चोरी हो जाते तो कभी किसी की अंडरवियर गायब हो जाती, तो कभी किसी की साबुनदानी बगल वाली बिल्डिंग की छत पर पड़ी मिलती। रात में लाइट कट जाने के बाद अँधेरे में एक–दूसरे को चप्पल–जूते मारने का भी रिवाज था। किसी एक लड़के को रजाई ओढ़ाकर पीटने का भी चलन था। इस क्रिया को लड़के श्पेलाईश कहते थे। गर्मियों की शाम को छत की धुलाई हो जाती थी, जिस पर चटाई बिछाकर बच्चे पढ़ाई करते थे। जाड़ों की सर्द धूप में भी बच्चे चटाई के .पर रजाई बिछाकर पढ़ते–लिखते थे। कभी सो जाते थे और कभी सामने वाली बिल्डिंग पर धूप सेंकती कन्याओं को देखकर आँख सेंक लेते थे।

हाँ, तो मैं कह रहा था कि वार्डन मुझे बैंग्लोर की तुलना में दिल्ली या नोयडा में ही किसी कंपनी को ज्वाइन करने की नसीहत दे रहे थे। मेरे साथी का अखबार पलटना जारी था। इस बीच मेस का एक कर्मचारी काँच के तीन गिलासों में ठंडा पानी लेकर आ गया। मैं वार्डन से हाथ–मुँह धुलने को कहते हुए मेस की ओर जाने लगा। चूँकि मैं उस हॉस्टल का वाशिंदा रह चुका था, इसलिए कहीं भी जा सकता था। हाथ–मुँह धुलने का तो बहाना था। मैं एकबार उस जगह को भरपूर देख लेना चाहता था, जहाँ मैंने अपने जीवन के अड़तालीस महीने व्यतीत लिए थे। गैलरी पार करके मैं वाशबेसिन की ओर गया, मुँह धुला और वॉटरकूलर से निकालकर पानी पीने लगा। वहीं छत पर खड़े होकर कुछ देर तक आसपास की चीजों और आसपास के मकानों, दरख्तों को देख रहा था। सब वैसे ही थे। इस परिवेश की स्मृतियाँ जेहन में इस कदर पैबस्त हो गयी हैं कि आज भी कभी–कभी इस जगह का सपना आता है। मैं दाहिने हाथ की तरफ वाले कमरे

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

में घुस गया। कमरे का दरवाजा ज्यादा बड़ा नहीं था। उसी से लगी हुई दाहिने तरफ एक खिड़की थी। उसी से होकर कूलर की हवा अन्दर कमरे में आती थी। दरवाजे से घुसते ही दायीं ओर दीवार से सटा मेरा बिस्तर था। उसमें कूलर सीधी और पूरी की हवा आती थी। पता नहीं इस समय यह बिस्तर किसको अलॉट हुआ होगा! उस हॉलनुमा कमरे में सभी बिस्तर लगे थे। बच्चे उस समय कॉलेज गए हुए थे, इसलिए सन्नाटा था। किसी के बिस्तर पर कॉपी तो किसी के बिस्तर पर पॉलीथिन वाली फाइल पड़ी थी। दरवाजे के पास वाले उस बिस्तर पर मैं बैठ गया, लगभग लेटने की मुद्रा में। कुछ क्षण के लिए पता नहीं क्या हो गया! फिर न जाने मन में क्या आया, मैं विदा होती बेटी की तरह फफक–फफक कर रोने लगा। अचानक दरवाजे से स्वीपर आया और आगे बढ़कर भीतर वाले दूसरे कमरे में चला गया। मैंने गालों तक आ गए आँसुओं को जल्दी–जल्दी पोछा और वापस ऑफिस की ओर आया तो मेरे साथी ने बताया कि नीचे कुछ लोगों से मिलने वार्डन सर चले गए। गेट के पास कुर्सी पर बैठे आदमी से मैंने पूछा कि वार्डन सर कहाँ गए? तो उसने बताया कि हॉस्टल खाली करने की नोटिस आ गयी है। मकान मालिक चोपड़ा साहब भयंकर कर्ज में डूब गए थे। उनकी यह बिल्डिंग बिक चुकी है। या तो हॉस्टल बंद हो जाएगा या फिर कहीं और शिफ्ट किया जाएगा।

हम लोग नीचे उतर आए थे। वार्डन से कुछ भी कहने–सुनने का यह मुनासिब समय न था। मैंने उनका अभिवादन किया और अपने साथी के साथ स्टेशन की ओर चल दिया। इस बार सोचकर आया था कि एक फोटो या सेल्फी जरूर लूँगा। लेकिन उसके लिए भी यह वक्त माकूल न था। हालाँकि कई बार हॉस्टल जाना हुआ पर एक भी फोटो नहीं ले पाया। न अपने साथ अपने कमरे की और न ही वार्डन की। इस हॉस्टल की तस्वीर मेरे जेहन के अलावा मेरे पास और कहीं नहीं थी। यहाँ से निकलने के बाद न जाने कितनी बार यहाँ के सपने आए। शायद अगली बार जब इस रास्ते से गुजरना हो तो यह बिल्डिंग न मिले। इसकी जगह तिमंजिला काँच से लैस शायद कोई चमचमाता मॉल खुल जाए। अगली बार जब यहाँ आना होगा तो इस जगह का नक्शा बदल चुका होगा। मेरी स्मृतियों में बसी बिल्डिंग का ध्वंस हो चुका होगा। जाते–जाते इस बात का अफसोस

हो रहा था कि अब इस जगह की याद सिर्फ याद बनकर रह जाएगी। बहरहाल यादों में बसीं तस्वीरें, मोबाइल में कैद तस्वीरों की तुलना में ज़्यादा सुरक्षित, ज्यादा आकर्षक, ज्यादा स्थायी और ज्यादा भावुक कर देने वाली होती हैं।

मैं और मेरा साथी दोनों लोग स्टेशन पहुँच चुके थे। गाड़ी के आने का संकेत हो चुका था। हम दोनों प्लेटफॉर्म नंबर तीन की ओर जा रहे थे।

फार्म – 4

स्माचार–पत्र पंजीयन केन्द्रीय कानून 1956 के आठवें नियम के अन्तर्गत **'मधुराक्षर' त्रैमासिक पत्रिका** से संबंधित स्वामित्व और अन्य बातों का आवश्यक विवरण–

1. प्रकाशन का स्थान : जिला कारागार के पीछे,
   9 ब, मनोहर नगर,
   फतेहपुर (उ.प्र.) 212601
2. प्रकाशन की आवर्तिता : त्रैमासिक
3. प्रकाशक/मुद्रक का नाम : बृजेन्द्र अग्निहोत्री
4. राष्ट्रीयता : भारतीय
5. सम्पादक का नाम : बृजेन्द्र अग्निहोत्री
6. राष्ट्रीयता : भारतीय
7. पूरा पता : जिला कारागार के पीछे,
   9 ब, मनोहर नगर,
   फतेहपुर (उ.प्र.) 212601
8. कुल पूंजी का 1 प्रतिशत
   से अधिक शेयर वाले
   भागीदारों का नाम व पता : स्वत्वाधिकारी बृजेन्द्र अग्निहोत्री

*''मैं **बृजेन्द्र अग्निहोत्री** घोषित करता हूँ कि मेरी जानकारी एवं विश्वास के अनुसार उपर्युक्त सभी विवरण सत्य हैं।''*

–बृजेन्द्र अग्निहोत्री

शोध लेख

कोशल से छत्तीसगढ़ की यात्रा
(नामकरण के ऐतिहासिक संदर्भ में)

मनीष कुमार कुर्रे
हिन्दी विभाग, शासकीय दिग्विजय महाविद्यालय राजनांदगाँव, छत्तीसगढ़
मो. 9669226959

छत्तीसगढ़ का इतिहास बहुत प्राचीन है। इस विषय में विद्वानों में परस्पर मतभेद अद्यतन जारी है। संभव है कि आने वाले समय में नए तथ्यों का उजागर भी हो जाए जो आज तक हमसे छिपा हुआ है। नामकरण के संदर्भ में भी विद्वानों ने अलग–अलग मत प्रस्तुत किए हैं। वर्तमान छत्तीसगढ़ का संबंध प्राचीन गौरव पूर्ण इतिहास से जोड़कर भी देखा जाता है। छत्तीसगढ़ को महाभारत एवं रामायण काल से भी जोड़कर बताया गया है, जिसके साक्ष्य छत्तीसगढ़ में आज भी विद्यामान हैं। वास्तव में यह राज्य मध्यप्रदेश का हिस्सा जो दक्षिण पूर्व में स्थित हैं। यह शोध का विषय हैं कि छत्तीसगढ़ राज्य का नाम कब और कैसे पड़ा? इस धरा को कई नामों से अभिमत किया जाता रहा है यथाः– प्राचीन तोसल या कोसल, महाकोसल, दक्षिण कोसल, दंडकारण्य (महारण्य), दंडकवन, चेदिकोसल, चेदिगढ़, चेदिजनपद, अधिष्ठी, महाकांतार, महाकारण्य, कोसल दक्षिण, कोसल जनपद, दंडक जनपद आदि।

मुख्य शब्द : कोसल, महाकोसल, दक्षिण कोसल, दंडकारण्य, दंडकवन, चेदिकोसल, चेदिगढ़ या चेदिशगढ़, चेदिजनपद, अधिष्ठी, महाकांतार, महाकारण्य, कोसल दक्षिण, कोसल जनपद, दंडक जनपद

उद्देश्य :

1. छत्तीसगढ़ के इतिहास के संदर्भ में नामकरण को उजागर करना।
2. विभिन्न नामों के आधार पर विश्लेषण करना।
3. साहित्य के क्षेत्र में छत्तीसगढ़ शब्द का प्रयोग।

कोसल : चौथी शताब्दी के प्रयाग प्रशस्ति में कोसल नाम ही उल्लेखित है। उत्कीर्ण लेखों में ''स'' एवं ''श'' दोनों अक्षरों का प्रयोग किया गया है। वायु पुराण में भी कोसल का ही उल्लेख मिलता है।[1] कालिदास कृत रघुवंशम् में कोसल और उत्तर कोसल का वर्णन मिलता है।[2] दक्षिण कोसल (छत्तीसगढ़) राज्य के सर्वप्रथम संस्थापक नरेश वैवस्त मनु के पुत्र सुद्युमन थे।[3] रतनपुर शाखा के कलचुरी शासक जाजल्य देव के अभिलेख में भी दक्षिण कोसल नाम अंकित है। गुप्त कालीन इलाहाबाद हरिषेण लिखित प्रयाग प्रशस्ति में भी दक्षिण कोसल का ही उल्लेख है।[4]

दक्षिण कोशल/कोसल : प्राचीन समय में छत्तीसगढ़ को दक्षिण कोसल के नाम से जाना जाता था । कोसल शब्द की उत्पत्ति संस्कृत शब्द कुशल से हुई है, जिसका अर्थ मुदित अथवा प्रसन्न से है। छत्तीसगढ़ में कोसल या कोसलीय नामक गाँव मल्लार से 16 किलोमीटर दूरी पर स्थित है ऐसी मान्यता है कि माता कौशल्या इसी गाँव से थी, जिसके कारण कोसल की उपमा छत्तीसगढ़ को मिली।[5] दक्षिण कोसल का सर्वप्रथम उल्लेख पाणिनी के अष्टाध्यायी से प्राप्त होता है। इस समय तक यह जनपद का स्वरुप धारण कर चुका था। अपने वन गमन के समय श्री राम दंडकारण्य अर्थात् छत्तीसगढ़ में आये और कुछ समय व्यवतीत किये।[6] रामायण से दो कोसल की जानकारी मिलती है। प्रथम– उत्तर कोसल जो सरयू नदी के तट पर विस्तृत फैला हुआ है। द्वितीय– दक्षिण कोसल जो विंध्यांचल पर्वत के दक्षिण में फैला हुआ था। इस समय दक्षिण कोसल के राजा भानुमान थे, जिसका दूसरा नाम भानुमंत था। माता कौशल्या इन्हीं की पुत्री मानी जाती है, जिनको भानुमति कहा जाता था। रामायण युग में श्री राम ने अपने पुत्र कुश को दक्षिण दिशा में स्थित दक्षिण कोसल का राज्य दिया और अपने दूसरे पुत्र लव को उत्तर कोसल का अधिपति बनाया। इस समय दक्षिण कोसल सात कोसलों में विभाजित था– 1. मेकल कोसल 2. कांति कोसल 3. चेदिकोसल 4. दक्षिण कोसल 5.

काशिकोसल 6. पूर्व कोसल 7. कलिंग कोसल। डॉ. हीरालाल शुक्ल ने छत्तीसगढ़ को दक्षिण कोसल कहा है।[7]

कालिदास के रामगिरि को रामगढ़ मानने वाले विद्वानों का मत है कि दंडकारण्य प्राचीन छत्तीसगढ़ का वाचक है। पुराणों के प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि दक्षिण कोसल (अर्थात् आधुनिक छत्तीसगढ़) से भिन्न दंडक एक स्वतंत्र जनपद था। अतएव उसकी अवस्थिति दक्षिण कोसल जनपद में नहीं मानी जा सकती। रामायण के ही साक्ष्य से ज्ञात होता है कि उस युग में दो कोसल थे जैसा कि पहले कहा जा चुका है। कोसल द्वय पर दो पृथक–पृथक राजा शासन करते थे–

इमौ कुशीलवौ राजनभविष्यच्य नाराधिप।
कोसलेशु कुशं वीरं उत्तरेषु तथा लवम्।।

(रामायण, 7.107.7)

इक्षवाकु द्वारा प्रवर्तित सूर्यवंश के राजा उत्तर कोसल पर राज्य करते थे और अयोध्या उनकी राजधानी थी। दशरथ द्वारा सम्पादित अश्वमेघ यज्ञ में भानुमंत नामक किसी कोसल राजा को आमंत्रित किया गया था–

तथा कोसलराजानं भानुमंतं सुसंस्कृतम्।।

(रामायण, 1.13.26)

यह भानुमंत संभवतः दक्षिण कोसल अर्थात् प्राचीन छत्तीसगढ़ का शासक व माता कौशल्या का पिता था।[8]

त्रिपुरी के राजा काकल्य द्वितीय (990 से 1055) के समय कलचुरी वंशीय कलिंग राजा ने दक्षिण पर आक्रमण कर विजय प्राप्त किया और तुमान को राजधानी बनाई। यही तुमान दक्षिण कोसल को सबसे पुरानी राजधानी मानी जाती है। राजिम स्थित मंदिर के एक शिलालेख से यह स्पष्ट होता है कि 11वीं–12वीं शताब्दी में दक्षिण कोसल का अधिकांश क्षेत्र कलचुरी वंश के अधीन था।[9] इसके पश्चात इसका विस्तृत क्षेत्र महाकोसल कहा जाने लगा। श्री सी. व्ही. वैद्य ने छत्तीसगढ़ को कोसल कहा है।[10]

कोसल के सन्दर्भ में तोसड्डु नामक देश का उल्लेख सुदेवराज के आरंग ताम्रपत्र (EI,XXXII-20) में हुआ, जो आरंग के दक्षिण पूर्व में अवस्थित था तथा जिससे पौराणिक तोसल का संकेत मिलता है। संभव है कालांतर में यह नाम कोसल हो गया हो।[11]

ह्वेसांग ने भी अपने यात्रा 639 ई. के विवरण में लिखा है कि मध्य देश से हीरे लाकर बेचा जाता था। यह मध्य देश महानदी तट स्थित कोसल देशीय सम्बलक या सम्बलपुर से अन्य नहीं है। पूर्व के तट पर एक बनंदरगाह (पोर्ट) था, जिसका नाम ''कोसल'' था। कोसल नामक यह बंदरगाह कोसल देशीय हीरे के व्यापार के कारण विदेश में विख्यात रहा होगा ऐसा अनुमान किया जाता है।12

महाकोसल : महाकोसल नाम का कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता। इस सन्दर्भ में डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र ने लिखा है– ''दंडकारण्य यह क्षेत्र दक्षिण कोसल कहलाता था। महाकोसल कब और क्यों और किसके कारण चल पड़ा ? इसका कोई पक्का पता नहीं जान पड़ता। सहस्त्रार्जुन के वंशज चेदि, हैहयों ने जिनका इस ओर डेढ़ हजार वर्ष तक राज्य रहा, इसकी महत्ता बढ़ाने के लिए इसे महाकोसल कहना प्रारम्भ कर दिया। जैसे :– नदी का नाम महानदी हो गया, आराध्य देवी का नाम महामाया हो गया, छोटे इलाके का नाम महासमुंद हो गया, राजाओं का नाम महाशिव गुप्त हो गया आदि। यही महाकोसल आज का छत्तीसगढ़ कहलाता है''।13 मि. कनिंघम ने अपने पुरातात्विक रिपोर्ट आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया (1881–82) की रिपोर्ट में छत्तीसगढ़ का पुराना नाम ''महाकोसल'' बतलाया।14 हरिठाकुर के अनुसार प्राचीन छत्तीसगढ़ कोसल नाम से प्रसिद्ध था। मालवी प्रसाद श्रीवास्तव ने छत्तीसगढ़ शीर्षक कविता में इसे महाकोसल कहा है–

महाकोसल का यह शुभनाम,
मिला था जिसे वीरता जन्य नाम,
जहाँ ये मोरध्वज से वीर
*विश्वविजयी बल गुण के धाम।।*15

पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय ने महाकोसल का गुणगान इन पंक्तियों मे किया है–

हमें है स्वर्ग से प्यारा, महाकोसल–महाकोसल।
हमारे नेत्र का तारा, महाकोसल–महाकोसल।
महानदी जहं बहत महामाया जहं राजत।
नृपति महाशिव तथा महाभव क्रम सो भाजत।
निकट महाकांतार राज्य जाके छवि छाजे।
दक्षिण दिशि महं देश महाकोसल सोई राजे।
चित्रोत्पला बहत जहुं सरिता है कोसल के तीरा।
*पुण्य क्षेत्र बन गिरि छवि अनुपम, उपजे कंचन हीरा।।*16

माहाकांतार : वैदिक काल में यह भू–भाग माहाकांतार नाम से प्रसिद्ध था। माहाकांतार अर्थात् घना जंगल जो दण्डक क्षेत्र था। आर्यों के दक्षिण भारत में प्रवेश के पूर्व उन्हें माहाकांतार से होकर जाना पड़ता था। इसी कारण इसे दक्षिणापथ भी (दक्षिण भारत जाने का मार्ग) कहा जाता था। यह भी माना जाता है कि प्रसिद्ध नागार्जुन एक रोमन व्यवसायी के कन्या से प्रेम करते थे और इसी कारण वे इस रास्ते से व्यापार के लिए जाते थे। उस समय इसे दक्षिणापथ ही कहा जाता था।17

दक्षिणापथ : दक्षिणापथ का शाब्दिक अर्थ दक्षिणवर्ती मार्ग है, जिसका उल्लेख ऋग्वेद (10.161.18), एतरेय ब्राम्हण (7.34), बौद्धायन धर्म सूत्र (1.1.2.13), जैमिनीय उपनिषद् (2.440), प्रश्नोपनिषद् (2.1), वृहदार ण्याकोपनिषद् (2.6.3), महाभारत (सभापर्व 31.17), मार्कण्डेय पुराण (57.45), वायु पुराण (45.104.,124.88.11), मत्स्यपुराण (112.46), विष्णु पुराण (4.2.3.), भागवत पुराण (9.1.41), राजतरंगिणी (4.152.,8.227) आदि संस्कृत ग्रंथों व समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति से हुआ है। जिसकी चर्चा फा–हियान (Travels of Fa-Hian,ed.s.bcal. p-139) के यात्रा विवरण में मिलती है। पुराणों के विवरण से ज्ञात हो जाता है कि नर्मदा का दक्षिणवर्ती अंचल ही दक्षिणापथ का वाचक था। वायु पुराण (45.104) में यह चर्चा है कि गोदावरी दक्षिणापथ में प्रवाहित होती थी। महाभारत में भी तेलवाहा, शबरी व गोदावरी का उल्लेख मिलता है। पालि साहित्य में दक्षिणापथ को गोदावरी के तट पर अवस्थित बताया गया है।18

दंडकारण्य : दंडकारण्य का सर्वप्रथम उल्लेख आदि कवि वाल्मीकि के रामायण में मिलता है। इस आधार पर ऐसा प्रतीत होता है कि विंध्य क्षेत्र के दक्षिण व गोदावरी के उत्तर पूर्व वन्य भाग को ही दंडकारण्य कहा जाता था। (अरण्यकांड, 10) यहाँ एक उद्धरण प्रस्तुत है जिससे दंडकारण्य की अवस्थिति का ज्ञान हो सकेगा–

प्रविश्य तु महारन्य दंडकारण्यमात्मवान् ।
रामो ददर्श दुधुर्षताप्साश्रममंडलम्।।

(अरण्यकांड, 1)

उपर्युक्त श्लोकांतर्गत प्रयुक्त दंडकारण्य की व्याख्या रामानुजाचार्य ने इस प्रकार की है–

''दंडकस्य राज्ञो देशः शुक्र शापवशादरण्यमभूत ।
ततः प्रभृति दंडकारण्य संज्ञा।।

यहाँ एक संकेत यह भी कि दंडकारण्यक अपर पर्याय महारण्य भी था। जो समुद्र गुप्त की प्रयाग प्रशस्ति का महाकांतार ही है। वह दंडकारण्य–

शरण्यं सर्वभूतानां सम्मृष्टाजिरं सदा।
मृगैबर्हुभिराकीर्ण पथिसंघैः समावृतम् ।।

(अरण्यकांड, 3.1.3)

एक आधार यह भी कि यहाँ महावृक्ष अर्थात शालवृक्ष तथा कंद–मूल की प्रचुरता के कारण इसका नाम महाकान्तार या दंडकवन माना जाता है–

समिदि्भस्तोयकलशैः फलमूलैश्च शोभितम्।
आरण्यैश्च महावृक्षैः पुष्पैः स्वादुफलैर्वृतम्।।

(अरण्यकांड, 3.1. 15)[19]

कुछ विद्वानों ने प्राचीन बस्तर को ही दंडकारण्य माना है। जो विंद्यांचल तथा शैवल पर्वत के मध्य अवस्थित था–

''विन्ध्यशैवलयोर्मध्ये'' (अरण्यकांड, 3.12.14)

कालिदास के रघुवंशम् (12.9) में भी दंडकारण्य का जो वर्णन है :–

स सीतालक्ष्मणसखः सत्याद्गुरूमलोपयन्।
विदेश दंडकारण्यं प्रत्येकं च सतां मनः।।

(रघुवंशम्, 12.9)

रैप्सन ने (Ancient India, page- 116) बहुत पहले महानदी तथा गोदावरी के मध्य क्षेत्र को ही दंडकारण्य माना था। यह भी की शुक्तिमत, ऋक्षवान् तथा विन्ध्यांचल दक्षिणपथ की सीमा बनाते थे। दंडकारण्य को प्राचीन बस्तर के रूप में सिद्ध करने वाले विद्वानों में मिलिन्दपञ्हों (पृ.130), के आधार पर कनिंघम (Ancient Geography of India, page- 591) तथा पौराणिक साक्ष्यों के आधार पर एस. एम. अली (The Geography ot the puranas, New Dehli, 1966, page- 157) ने भी प्राचीन बस्तर को ही दंडकारण्य का उपलक्षक माना है।[20]

अधिष्ठी : प्रसिद्ध शास्त्री टालेमी का मत है कि अधिष्ठान पर्वत माला इसके दक्षिण में होने के कारण यह अंचल ''अधिष्ठी'' कहलाया हो। यही कालांतर में अधिष से छत्तीस हो गया। इस विचार से मि. कनिंघम भी सहमत हैं। लेकिन इस सम्बन्ध में कुछ स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता।

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

चेदिशगढ़ : रायबहादुर हीरालाल का मत है कि यह राज्य चेदि शासकों के अधीन भी रहा था। अतः उसे चेदिशगढ़ कहा गया। छत्तीसगढ़ को चेदिशगढ़ का ही अपभ्रंश रूप माना जाता है। रतनपुर के शासक चेदि कहलाते और उनके द्वारा चलाया गया संवत् चेदि संवत् कहलाता था। बिलासपुर आमोदा ग्राम में प्राप्त अभिलेख में चेदिस्य संवत् 831 अंकित है।[21] इंडियन एंटिक्यूरी (1933) में प्रो. रायबहादुर हीरालाल ने कहा है कि छत्तीसगढ़ कभी चेदिशगढ़ रहा है लेकिन फिर भी चेदिशगढ़ से छत्तीसगढ़ की ध्वनि विकास संभव नहीं है। यह परिवर्तन ध्वनि नियम के विरुद्ध जान पड़ता है। भाषा विज्ञान के दृष्टि से छत्तीस की व्युत्पति – षटत्रिंशत् –छत्तीस, छत्तिसा–छत्तीस इस प्रकार होता है।[22] अतः उक्त व्युत्पत्ति खींचतान कर ही की गयी है। इसलिए इसे कल्पना मात्र मानते हैं। लेकिन चेदि शासकों के बात को नाकारा भी नहीं जा सकता।

गढ़ का वाचक छत्तीसगढ़ : छत्तीसगढ़ का नामकरण गढ़ों के आधार पर भी किया जाता है। अर्थात् छत्तीसगढ़ शब्द का अर्थ है :– ''36 गढ़'' या ''किले''। कुछ विद्वानों का मानना है कि गढ़ों के आधार पर इन गढ़ों में शिवनाथ नदी के उत्तर में 18 गढ़ और शिवनाथ नदी के दक्षिण में 18 गढ़ थे। कुल 18+18 = 36 गढ़ थे। हेविट के सेटलमेंट रिपोर्ट सन् 1868 के अनुसार गढ़ों के नाम निम्नानुसार थे–

शिवनाथ के **उत्तरी भाग** के गढ़ जो रतनपुर राज्य के अंतर्गत थे– 1. रतनपुर 2. मारो 3. विजयपुर 4. खरोद 5. कोटगढ़ 6. सोठीगढ़ 7. नवागढ़ 8. ओखरगढ़ 9. पंडरभाठा 10. सेमरियागढ़ 11. मदनपुर (चांपा जमींदार) 12. कोसगई (कोसागढ़) छूरी जमींदारी 13. लाफागढ़ 14. केंदागढ़ 15. मातिनगढ़ 16. उपरोडागढ़ 17. कंडरी (पेंड्रा) 18. करक्कटी (अब बघेलखण्ड में)।

शिवनाथ के **दक्षिण भाग** के गढ़ जो रायपुर राज्य के अंतर्गत थे– 1. रायपुर 2. पाटन 3. सिमगा 4. सिंगारपुर 5. लबन 6. अमीरा 7. दुर्ग 8. सरदा या सारधा 9. सिरसा 10. मोहदी 11. खलारी 12. सिरपुर 13. फिंगेश्वर 14. राजिम 15. सिंघनगढ़ या सिंगारगढ़ 16. सुअरमार 17. टेंगनागढ़ 18. अकलतरा या अकलबाड़ा।[23]

1457 वि. के अंतर्गत ये गढ़ कलचुरी शासन काल के रतनपुर शाखा एवं रायपुर शाखा के अंतर्गत आते थे। प्राचीन समय में इन गढ़ों या दुर्ग को सुरक्षा का एक महत्वपूर्ण साधन माना जाता था। मि.

इलियट की रिपोर्ट भी यह प्रमाणित करती है कि बस्तर के राजा भैरवदेव ने अपने छोटे भाई को 18 गढ़ दिये थे। इसी तरह सम्बलपुर और पाटन के जाट राज्यों के सम्बन्ध में 18 गढ़ों का नाम दिया जाता है। कालीहांडी राज्य जो पहले करोंद कहलाता था, भी पहले 18 गढ़ों में विभाजित था। मि. ब्लंट ने भी गढ़ों की बात स्वीकार किया और बताया की एक–एक गढ़ के अंतर्गत 84 गाँव होते थे।[24]

गढ़ शब्द की व्याख्या : ऋग्वेद में एक अन्य शब्द ''**गर्त**'' का उल्लेख मिलता है। इस शब्द के दो अर्थ बताया गया है– मानव आवास तथा गाड़ी। **निरुक्त** ने इसका तीसरा अर्थ दिया है– ''**गढ्ढा**''**।** किले के चारों ओर बना गढ्ढा गर्त कहा जाता है। गढ़ शब्द की उत्पत्ति इसकी संरचना तथा उपयोगिता के कारण इसी गर्त से हुई है। एक अन्य शब्द ''**कोट**'' है जो परकोटा का लघु रूप है। इसकी उत्पत्ति संस्कृ त के ''**प्राकार**'' शब्द से हुई है जिसका अर्थ सुरक्षा दिवाल से है। गढ़ शब्द की उत्पत्ति ''**गर्त**'' से हुई जो, जिसका तात्पर्य ''**गढ्ढे**'' से है, जिसे संस्कृत में ''**परिखा**'' कहा जाता है। ज्ञातव्य हो कि कौटल्य ने अपने अर्थशास्त्र में गढ़ों को दुर्ग कि संज्ञा दी है।[25]

मध्यकालीन सामंत भी सुरक्षा कि दृष्टि से गढ़ों का निर्माण कराते थे। बंदूक और करतूसों के आविष्कार के पूर्व सामंतों की रक्षा की दृष्टि से यह गढ़ अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते थे। राजपूत काल में भी दुर्गों (गढ़ों) का निर्माण अनिवार्य हो गया था। इस अवधि में गढ़ों के स्थापना का इतना अधिक महत्व हो गया कि इस गढ़ बहुल क्षेत्र का नाम छत्तीसगढ़ पड़ गया।[26] खैरागढ़ के प्रद्युमन सिंह ने लिखा है – प्राचीन समय में छत्तीसगढ़ विभागों में 36 राजा राज करते थे। इसमें 36 राजधानियाँ थी और प्रत्येक राजधानी में एक गढ़ था। गोपाल राय बिंझिया के गीत वर्णन में गढ़ों कि महत्ता की ओर इंगित करते हुए गढ़ों की संख्या की गणना की जाती थी–

कतेक राजा के परगना ,सात राजा के संजारी।
सोना राजा के बलौद, असी राजा के धमधा।
बावन के गढ़ा, बावन के मंडीला, बावन के वनराज।
अठारह गढ़ में रतनपुर और अठारह में राईपुर।।[27]

पंडित शुकलाल प्रसाद पाण्डेय छत्तीसगढ़ का गुणगान निम्न पंक्तियों में किया है–

कहलाती थी पूर्व चेदि ही दक्षिण कोसल।
गढ़ थे दृढ़ छत्तीस, नृपों के यही महाबल।
इसलिए तो नाम पड़ा छत्तीसगढ़ इसका।
जैसा इसका भाग्य जगा, जागा त्यो किसका।
श्रीपुर भांदक औ रतनपुर थे इसकी राजधानियाँ।
चेरी थी श्री औ शारदा, दोनों ही महारानियाँ।[28]

कुल या वंश के आधार पर : छत्तीसगढ़ के नामकरण के सम्बन्ध में छत्तीस कुलों या वंशों के क्षत्रियों का भी उल्लेख मिलता है, जिसे कुरी अर्थात् कुल या वंश से संबंधित माना जाता है। इस बात का प्रमाण गोपालचंद्र मिश्र कवि के खूबतमासा (1689) और बाबू रेवाराम कृत विक्रमविलास के निम्न पंक्तियों में मिलता है–

1. बसै छत्तीस कुरी सब दिन के बनवारी सब के।
(गोपालचंद्र मिश्र)[29]

2. बसत नगर शोभा की खानि चारि बरन निज धरम निदान।
और कुरी छत्तीस है तहां रूपराशि गुन पुरन महां।।
(बाबू रेवाराम)[30]

आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया (1881–82) की रिपोर्ट में श्री जे. डी. बेगलर ने लिखा है– इस क्षेत्र का नाम छत्तीस–घर था और कालांतर में छत्तीसगढ़ हो गया। यह बिहार के एक किवदंतियों पर आधारित था, जिसमें 36 घर बिहार से आकर बसे थे। जिसे इतिहासकार पी. एन. बोस ने अस्वीकार कर दिया।[31]

साहित्य में छत्तीसगढ़ शब्द का प्रयोग : साहित्य में छत्तीसगढ़ नाम का प्रथम प्रयोग खैरागढ़ रियासत के राजा लक्ष्मीनिधि राय के आश्रित चारण या भाट कवि दलराम राव ने अपने आश्रयदाता राजा के प्रशस्ति में 1497 ई. में किया था। वह छंद इस प्रकार था :–

लक्ष्मीनिधि राय सुनौ चित्त दे, गढ़ छत्तीस में न गढैया रही।
मरदुमी रही नहि मरदन के, फेर हिम्मत से न लडैया रही।
भव–भाव भरे सव काँप रहे, भय है नहिं जाय डरैया रही।
दलराम भनै सरकार सुनौ, नृप कोड न टाल अडैया रही।।

इसके पश्चात् साहित्य के क्षेत्र में द्वितीय बार छत्तीसगढ़ शब्द प्रयोग रतनपुर के कवि गोपालचंद्र मिश्र ने अपनी पुस्तक खूब तमासा में सन् 1689 (संवत् 1746) में किया–

छत्तीसगढ़ गाढ़े जहां बड़े गढ़ोई जानि।
*सेवा स्वामिन को रहे, सके ऐंड को मानि।।*32

साहित्य में हिंदी के जिन कवियों की रचनाओं में छत्तीसगढ़ शब्द का उल्लेख मिलता है उनका समय 300 से 400 वर्षों से अधिक नहीं जान पड़ता। पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय ने ''ए ग्रामर ऑफ छत्तीसगढ़ी डायलेक्ट'' की भूमिका में ऐसे कवियों में गोपालचंद्र मिश्र (रतनपुर हैहयवंशी राजा राजसिंह कार्यकालः– 1689–1712 ई.) प्रहलाद दुबे और बाबू रेवाराम कायस्थ का नाम गिनाया है। बाबू रेवाराम ने सिंहाँसन बत्तीसी के पद्यानुवाद विक्रमविलास (संवत् 1896 वि.) नामक ग्रंथ में दक्षिण कोसल और छत्तीसगढ़ शब्द के व्यवहार किया है :–

तिनमें दक्षिण कोसल देसा, जहां हरि औतु केसरी बेसा।
*तासु मध्य छत्तीसगढ़ पावन, पुण्यभूमि सुर मुनि मन भावन।।*33

इसी तरह गोपालचंद्र मिश्र के खूब तमासा में उल्लेख मिलता है :–

देस रतनपुर राजसिंह को सहर राजपुर सोहै।

इसके पूर्व प्राचीन कवियों ने इस क्षेत्र को छत्तीसगढ़ तो नहीं कहा लेकिन रतनपुर का उल्लेख अवश्य मिलता है :–

दक्खिन दहिने रहै तिलंगा, उत्तर माँझ होय करह कटंगा।
माँझ रतनपुर सौह दुआरा, झारखंड ये बांय पहारा।।

उस समय दक्षिण की ओर रतनपुर प्रसिद्ध नगरी थी। हो सकता है जायसी का आशय इसी रतनपुर से हो। जहाँगीरनामा में भी रतनपुर के सम्राट कल्याणशाह का उल्लेख मिलता है।34

कुछ विद्वानों के मानना है कि इस भू–भाग के लिए छत्तीसगढ़ नाम 1493 ई. के लगभग प्रचार में आया लेकिन अधिकारिक रूप में इस क्षेत्र के लिए छत्तीसगढ़ शब्द का प्रयोग प्रथम बार 1795 ई. में किया गया। इससे यह अनुमान किया जाता है कि संभवतः मराठाकाल में ही इस नाम को प्रसिद्धि मिली हो। जिसका उल्लेख बिलासपुर गजेटियर में हुआ है।35 छत्तीसगढ़ नामकरण आधुनिक काल में हुआ और इसी कारण प्राचीन या मध्यकालीन ग्रंथों में छत्तीसगढ़ नामक किसी स्थल या निवासियों का उल्लेख नहीं मिलता। अपने अंचल के बारे में लोगों को श्रद्धा रहती है और इसी श्रद्धावस छत्तीसगढ़ अंचल के द्विवेदी युगीन कवि शुकलाल प्रसाद पाण्डेय ने लिखा है :–

ये हमर देस छत्तिसगढ़ आगू रहिस जगत सिरमौर।
*दक्खिन कौसल नांव रहिस है मुलुक–मुलुक मा सोर।।*36

निष्कर्ष : प्राप्त स्त्रोतों के आधार पर हम पाते हैं कि छत्तीसगढ़ का नामकरण भिन्न–भिन्न मतों पर आधारित है। कुछ काल्पनिक प्रतीत होते हैं तो कुछ इतिहास के प्रमाणिक दस्तावेज भी प्रस्तुत करते हैं। छत्तीसगढ़ के नामकरण के सम्बन्ध में प्रस्तुत समस्त तर्कों, मतों का अध्ययन एवं अनुशीलन आज भी जारी है। कोसल से छत्तीसगढ़ नाम की यात्रा किस समय प्रारंभ हुआ, यह निश्चित तौर पर कह पाना टेढ़ी–खीर है। फिर भी इन सभी मतों को नाकारा नहीं जा सकता कि छत्तीसगढ़ का सम्बन्ध प्राचीन कोसल से रहा है। छत्तीसगढ़ गौरव नामक द्विवेदी युगीन खण्ड–काव्य में पंडित शुकलाल प्रसाद पांडेय ने छत्तीसगढ़ के विभिन्न नामों को इस तरह प्रस्तुत किया है–

सी. पी. हिंदी जिले प्रकृति के महाराम से।
थे पहिले ख्यात महाकांतार नाम से।
रामायण कालीन दंडकारण्य नाम था।
वन–पर्वत से ढका बड़ा नयनाभिराम था।
पुनि चेदि नाम विख्यात, फिर नाम गोंडवाना हुआ।
कहलाता मध्यप्रदेश अब खेल चुका अगणित जुआ।

संदर्भ ग्रंथ :

1. छत्तीसगढ़ी भाषा का उद्विकास, नरेन्द्र देव वर्मा, छत्तीसगढ़ राज्य हिंदी अकादमी रायपुर, 2009, पृष्ठ –24

2. छत्तीसगढ़ का समग्र इतिहास, डॉ. सुरेशचंद्र शुक्ला, डॉ. (श्रीमती) अर्चना शुक्ला, मातुश्री पब्लिकेशन श्री राम नगर रायपुर, संस्करण 2018, पृष्ठ – 01

3. तपश्चर्या एवं आत्मचिंतन गुरु घासीदास, बलदेव प्रसाद, जय प्रकाश मानस, रामशरण टंडन, राधा कृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2015, पृष्ठ – 24

4. समाग्र छत्तीसगढ़, हीरालाल शुक्ल एवं अन्य, छत्तीसगढ़ राज्य हिंदी ग्रंथ अकदमी रायपुर, संस्करण 2017, पृष्ठ – 10

5. छत्तीसगढ़ का इतिहास, डॉ. रामकुमार बेहार, छत्तीसगढ़ हिंदी ग्रंथ अकादामी रायपुर, चतुर्थ संस्करण 2018, पृष्ठ –13

6. दक्षिण कोसल (छत्तीसगढ़ का इतिहास तथा वास्तुशिल्प प्रारंभ से लेकर 13 वीं शती तक),डॉ. श्याम कुमार पांडेय, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादामी,भोपाल, प्रथम संस्करण, 2002, पृष्ठ – 29

7. छत्तीसगढ़ दिग्दर्शन(प्रथम भाग), मदन लाल गुप्ता, भारतेन्दु साहित्य समिति बिलासपुर, मध्यप्रदेश, 1996, पृष्ठ –291

8. लंका की खोज, डॉ. हीरालाल शुक्ल, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृष्ठ – 84/85/86/87/88/89

9. छत्तीसगढ़ दिग्दर्शन(प्रथम भाग), मदन लाल गुप्ता, भारतेन्दु साहित्य समिति बिलासपुर, मध्यप्रदेश, 1996, पृष्ठ –292

10. छत्तीसगढ़ इतिहास एवं संस्कृति(कोसल से छत्तीसगढ़ तक), डॉ. संजय अलंग, अनामिका प्रकाशन, रायपुर, 2019, पृष्ठ – 16

11. लंका की खोज, डॉ. हीरालाल शुक्ल, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृष्ठ –31

12. छत्तीसगढ़ी लोकजीवन एवं लोक साहित्य का अध्ययन, दयाशंकर शुक्ल, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1971, पृष्ठ – 18

13. छत्तीसगढ़ का इतिहास, डॉ. रामकुमार बेहार, छत्तीसगढ़ हिंदी ग्रंथ अकादामी रायपुर, चतुर्थ संस्करण 2018, पृष्ठ –13/14
14. छत्तीसगढ़ का इतिहास, डॉ. भगवान सिंह वर्मा, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादामी भोपाल, प्रथम संस्करण 1991, पृष्ठ – 05
15. तपश्चर्या एवं आत्मचिंतन गुरु घासीदास, बलदेव प्रसाद, जय प्रकाश मानस, रामशरण टंडन, राधा कृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2015, पृष्ठ –23/24
16. छत्तीसगढ़ी लोकजीवन एवं लोक साहित्य का अध्ययन, दयाशंकर शुक्ल, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1971, पृष्ठ – 20/21
17. छत्तीसगढ़ दिग्दर्शन(प्रथम भाग), मदन लाल गुप्ता, भारतेन्दु साहित्य समिति बिलासपुर, मध्यप्रदेश, 1996, पृष्ठ –290/291
18. लंका की खोज, डॉ. हीरालाल शुक्ल, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृष्ठ –36
19. प्राचीन छत्तीसगढ़, प्यारेलाल गुप्त, प्रकाशक पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, प्रथम संस्करण 1973, पृष्ठ – 42/43
20. छत्तीसगढ़ का इतिहास, डॉ. भगवान सिंह वर्मा, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादामी भोपाल, प्रथम संस्करण 1991, पृष्ठ – 05
21. छत्तीसगढ़ी का भाषा शास्त्रीय अध्ययन, डॉ. शंकरशेष, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल, संस्करण 1973, पृष्ठ – 04
22. छत्तीसगढ़ी लोकजीवन एवं लोक साहित्य का अध्ययन, दयाशंकर शुक्ल, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1971, पृष्ठ – 18
23. छत्तीसगढ़ का इतिहास, डॉ. भगवान सिंह वर्मा, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादामी भोपाल, प्रथम संस्करण 1991, पृष्ठ – 09/10
24. दक्षिण कोसल (छत्तीसगढ़ का इतिहास तथा वास्तुशिल्प प्रारंभ से लेकर 13 वीं शती तक),डॉ. श्याम कुमार पांडेय, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादामी,भोपाल, प्रथम संस्करण, 2002, पृष्ठ – 25/26
25. छत्तीसगढ़ का इतिहास(1818–1854), डॉ. भगवान सिंह वर्मा, सेंट्रल बुक हॉउस, रायपुर, 1986, पृष्ठ – 07
26. छत्तीसगढ़ी भाषा का उद्विकास, नरेन्द्र देव वर्मा, छत्तीसगढ़ राज्य हिंदी अकादमी रायपुर, 2009, पृष्ठ –21/22
27. छत्तीसगढ़ गौरव, शुकलाल प्रसाद पाण्डेय, मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद, भोपाल, 1972, पृष्ठ –6
28. छत्तीसगढ़ दिग्दर्शन(प्रथम भाग), मदन लाल गुप्ता, भारतेन्दु साहित्य समिति बिलासपुर, मध्यप्रदेश, 1996, पृष्ठ –298
29. छत्तीसगढ़ दिग्दर्शन(प्रथम भाग), मदन लाल गुप्ता, भारतेन्दु साहित्य समिति बिलासपुर, मध्यप्रदेश, 1996, पृष्ठ –297
30. छत्तीसगढ़ का इतिहास, डॉ. भगवान सिंह वर्मा, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादामी भोपाल, प्रथम संस्करण 1991, पृष्ठ – 06/07
31. छत्तीसगढ़ का इतिहास, डॉ. रामकुमार बेहार, छत्तीसगढ़ हिंदी ग्रंथ अकादामी रायपुर, चतुर्थ संस्करण 2018, पृष्ठ –16
32. छत्तीसगढ़ी बोली व्याकरण एवं कोश, डॉ. कांति कुमार जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, चतुर्थ संस्करण 2018, पृष्ठ – 28
33. छत्तीसगढ़ी का भाषा शास्त्रीय अध्ययन, डॉ. शंकरशेष, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल, संस्करण 1973, पृष्ठ – 06
34. प्राचीन छत्तीसगढ़, प्यारेलाल गुप्त, प्रकाशक पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, प्रथम संस्करण 1973, पृष्ठ – 38
35. छत्तीसगढ़ दिग्दर्शन(प्रथम भाग), मदन लाल गुप्ता, भारतेन्दु साहित्य समिति बिलासपुर, मध्यप्रदेश, 1996, पृष्ठ –300
36. छत्तीसगढ़ गौरव, शुकलाल प्रसाद पांडेय, मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद, भोपाल, 1972, पृष्ठ 1/53

लेख

इक्कीसवीं सदी की स्त्री
भारतीयता की पोषक या विनाशक ?

डॉ. आशा मिश्रा 'मुक्ता'

मातृ और पितृसत्ता के बीच पिसती हुई स्त्री 21वीं सदी तक पहुँच चुकी है जहाँ आधुनिकतावाद, स्वतंत्रता, स्वच्छंदता के साथ सभ्यता, संस्कृति और परम्परा का मुठभेड़ चल रहा है। पीढ़ियों के बीच जंग जारी है। ऐसा माना जा रहा है कि स्त्रियों की स्वच्छंदता और स्वतंत्रता भारतीय संस्कृति और सभ्यता का विनाशक है। इससे इतना तो साफ हो जाता है कि स्त्री ही सभ्यता और संस्कृति की पोशक है। अब बात यह है कि अबला कहलाने वाली स्त्री क्या सच में इतनी शक्तिशाली हो चुकी है कि अपनी वर्षों पुरानी संस्कृति को प्रभावित कर रही है? परंपरा तोड़ रही है और सभ्यता का विनाश कर रही है ? हमारी सभ्यता या संस्कृति क्या इतनी कमजोर है कि आसानी से इसका हनन किया जा सके ? इसके लिए हम पाश्चात्य सभ्यता को भी दोषी मानते हैं जिसका अनुकरण कर हम बर्बाद हो रहे हैं और समाज को नुकसान पहुँचा रहे हैं। क्या पाश्चात्य सभ्यता में इतनी शक्ति है जो हमारी सदियों पुरानी सभ्यता का विनाश कर सके ? आज की स्त्री क्या वाकई में स्वच्छंदता या स्वतंत्रता की सीमा तोड़ चुकी है जिससे समाज लज्जित हो रहा है? स्त्रियों की वर्तमान स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए एक नजर प्राचीन काल में डालकर देखते हैं और पता लगाते हैं कि आज की स्त्री उनसे कितनी अलग है।

पीछे मुड़कर देखने पर वैदिक और पौराणिक काल की मातृसत्तात्मक शासन व्यवस्था नजर आती है जिसमें घर की मुखिया स्त्री होती थी। वह पूर्ण आत्मनिर्भर सम्पूर्ण कुटुम्ब का भरण पोषण करने का अधिकार रखती थी। 'वर' जिसे पति कहते हैं ये शब्द ही स्त्री की स्वायत्तता सिद्ध करने के लिए काफी है। 'वर' शब्द का अर्थ 'चुना गया' और चुनने वाला होता है पर संस्कृत भाषा में इसका स्त्रीलिंग नहीं है। अतः यह साफ है कि यह शब्द लड़कों के लिए ही प्रयोग में लाया जाता था। लड़की के लिए स्वयंवरा या पतिंवरा शब्द है। स्त्री अपना पति चुनकर उसे अपनी इच्छानुसार अपने पास रख सकती थी। स्वतंत्रता की बात करें तो उस युग में भी पुत्री के गुणों को देखते हुए सुवर्चला और सावित्री के पिता ने उन्हें स्वयं वर चयन करने की अनुमति दी और श्वेतकेतु एवं सत्यवान से विवाह करने दिया। परंतु आज की बात करें और नजर दौड़ा कर देखें तो आज के तथाकथित अत्याधुनिक युग में भी सत्तर प्रतिशत ऐसे पिता हैं जो विवाह के लिए पुत्री को स्वतंत्रता देना तो दूर उनकी मर्जी तक नहीं पूछते। उसकी इच्छा को लोक–लाज और इज्जत की वेदी में दफन कर दिया जाता है।

ऋग्वेद तथा अन्य वैदिक ग्रंथों में स्त्रियों का उल्लेख ऋषि के रूप में किया गया है। ऋषि वह स्त्री कहलाती थी जो मंत्रों से पूर्णतः रूबरू हो और अपनी सक्रियता से समाज में सार्थक हस्तक्षेप करने के लिए स्वतंत्र हो। लोपामुद्रा, अपाला तथा घोषा को महिला ऋषि माना गया है। ऋग्वेद में मंत्रों की रचनाकार कवि के रूप में इनका उल्लेख किया गया है। इसके पंचम मंडल में आत्रेय ऋषियों के मंत्र के साथ अपाला तथा विश्वारा के मंत्र भी समाहृत हैं। इन महिला ऋषियों ने अपनी रचनाशीलता के बल पर न सिर्फ ऋषि की मान्यता हासिल कीं बल्कि ब्रह्मवादिनी भी हुईं। ब्रह्मवादिनी उन बुद्धिजीवी महिला को कहा जाता था जो वाद विवाद में खुली बहस कर सके, शास्त्रों की रचना कर सके और धर्मोपदेश दे सके। कौषीतकि ब्राह्मण में बताया गया है कि वेद में पारंगत स्त्रियों को 'पथ्यस्वस्ति

वाक्' की उपाधि से सम्मानित किया जाता था। उत्तर–वैदिक काल में भी स्त्रियाँ पूर्ण स्वतंत्र और अपनी इच्छानुसार जीवन शैली जीने वाली हुई हैं। काशकृत्स्ना मीमांसा दर्शन की आचार्य थीं। उपनिषदों में गार्गी, मैत्रेयी, कात्यायनी और सुवर्चला आदि महिलाओं का जिक्र है जिन्होंने अपनी जीवनशैली स्वयं चुना था। ब्रह्मवादिनी गार्गी उस समय के बुद्धिजीवियों के बीच अकेली याज्ञवल्क्य के साथ बहस कर उनके ब्रह्मज्ञान को चुनौती दी। मैत्रेयी ने घर–बार और अटूट संपदा को त्याग कर याज्ञवल्क्य के साथ जाने का निर्णय लिया था और कात्यायनी अपने पति को छोड़ उसी घर–बार और ऐश्वर्य में रमने का फैसला किया। यज्ञों में पत्नी की सहभागिता अनिवार्य थी और वैदिक सीतायज्ञ तथा रुद्रयज्ञ जैसे यज्ञों का अनुष्ठान मात्र स्त्रियाँ ही करती थीं। अपनी पुरोहित वह स्वयं होती थीं और कर्मकांड भी स्वयं सम्पन्न करती थीं। ऋग्वेद की स्त्रियाँ स्वेच्छा से हथियार उठाकर युद्ध में शरीक होती रही हैं।

कैकेयी को चाहे कितना भी बदनाम कर लें पर सच्चाई यह है कि कैकेयी जैसी स्वाधीनता के मूल्य को सत्यापित करने वाली स्त्री अन्यत्र कम ही हुई हैं। वाल्मीकि के अनुसार दशरथ ने कैकेयी के

डॉ. आशा मिश्रा 'मुक्ता'

स्त्री विमर्श की मर्मज्ञ डॉ. आशा मिश्रा 'मुक्ता' साहित्यिक पत्रकारिता से जुड़ी सशक्त रचनाकार हैं। इनकी रचनाएं विविध प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं। डॉ. मिश्रा 'पुष्पक' सहित्यिकी त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका की 2018 से संपादक हैं।

संपर्क : 93/सी वेंगलराव नगर,
हैदराबाद – 500038
मो. 9908855400
ईमेल : ashamukta@gmail.com

साथ विवाह राज्यशुल्क देकर किया था, अर्थात् उन्होंने कैकेयी के पिता को वचन दिया था कि उनकी लड़की से यदि लड़का होगा तो अयोध्या का राजपद उसी को दिया जाएगा। परंतु दशरथ के मन में राम के प्रति मोह था और उन्होंने कैकेय राज को बहला कर राम को राज्याभिषेक के लिए तैयार कर लिया। कैकेयी से अपने पुत्र के प्रति यह अन्याय बर्दाश्त नहीं हुआ और उसने दिए गए वचन का प्रयोग कर पुत्र को राजा बनाया। इसे चालाकी या मौका परस्ती नहीं बल्कि दशरथ को दिया गया दंड मात्र कहा जाएगा जो उनके ऐतिहासिक भूल के लिए मिली। वाल्मीकि की कथा में अहिल्या कोई पत्थर नहीं बल्कि जीती जागती स्त्री है। अहिल्या को इन्द्र से प्रेम था जो पति गौतम से बर्दाश्त नहीं हुआ और उन्होंने अपनी पत्नी को त्याग दिया। पति द्वारा छोड़े जाने पर भी अहल्या वर्षों अकेली रही। सीता भी कोई अबला नहीं थी। वनगमन के वक्त राम से वाद–विवाद कर स्वयं वन गई और पति की पथगामिनी बन पत्नीधर्म का निर्वाह की। अपहरण के वक्त रावण से जूझीं और अशोक वाटिका में उसे अपने पास फटकने नहीं दी। यही नहीं रावणवध के उपरांत राम के कटाक्ष को चुपचाप सहन न कर उनसे वाद और संवाद किया तथा पति द्वारा त्यागे जाने पर अकेले पुत्रों का लालन पालन कर योद्धा बनाई। मिन्नतों के बावजूद राम को क्षमा न कर राम के साथ रहने के बजाय स्वयं को पृथ्वी के सुपुर्द कर दिया। तारा, मंदोदरी और द्रौपदी जैसी सशक्त एवं दृढ़निश्चयी स्त्रियाँ अपने पतियों से वाद, विवाद और संवाद कर पति को सही राह दिखाने की कोशिश की हैं। द्रौपदी ने जुआ में हारे पति को अपनी बुद्धि वैभव से गुलामी से निजात दिलाया। अपने एक सवाल से महावीर भीष्म को निरुत्तर कर दिया। शकुन्तला ने दुष्यंत द्वारा स्वयं को भूले जाने पर उसके महल में जाकर खूब बहस किया और प्रण करके पुत्र को पिता का राज्य छीनने योग्य बनाया। मंदोदरी रावण को सीता को लौटा देने के लिए कहती है जो रावण नहीं मानता पर युद्ध में अपनी हार निकट देख वह संधि हेतु मंदोदरी से सलाह माँगता है। तब मंदोदरी उसे डपटती है और कहती है कि अब संधि करके कोई फायदा नहीं यदि तुमसे यह नहीं होगा तो मैं तलवार उठाती हूँ। विपरीत परिस्थितियों में भी इन महिलाओं ने हिम्मत और दृढ़ निश्चयता का परिचय देने में विश्वास किया है न कि 'बिनती

बहुत करों का स्वामी' की रट लगाती फिरी हैं। हमने इनकी स्त्री सुलभ सहनशीलता, धैर्य और कर्तव्यपारायणता के गुण को कमजोर बताकर अबला बनाया और सशक्त पक्ष को नजरंदाज कर दिया। खुले विचार, वाक्चातुर्य और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और स्वच्छंदता की बात करें तो इसमें भी ऋग्वैदिक स्त्रियाँ पीछे नहीं रही हैं। उस वक्त भी महिलायें शारीरिक आवश्यकताओं को सहज और उन्मुक्त भाव से अभिव्यक्त करती थीं। स्त्रियों का दैहिक संसर्ग की कामना प्रकट करना तब भी बुरा नहीं माना गया। इस संबंध में लोपामुद्रा का पति अगस्त्य के साथ संवाद उल्लेखनीय है जब वह बूढ़े पति से कहती है कि "काया बुढ़ा जाए, फिर भी एक पति को कामना करती हुई पत्नी के पास आना चाहिए। (ऋग्वेद के पहले मंडल का 179वाँ सूक्त)"

जिस संस्कृति की हम बात करते हैं वह क्या ये नहीं है? आज कितनी स्त्रियाँ इनके बराबर पहुँच पाई हैं। आज भी अधिकतर स्त्रियाँ हर क्षेत्र में संघर्षरत हैं। अथक परिश्रम और व्यवस्था से संघर्ष कर जिसने विशेष मोकाम हासिल किया है उनपर तंज कसे जाते हैं। उनके रहन–सहन, बात–विचार पहनावा–ओढ़ावा यहाँ तक कि उसके सोच को भी कलुषित मानकर संस्कृति की दुहाई दी जाती है। स्त्रियों के लिए स्वाधीनता का गलत फायदा उठाने की बात की जाती है। विकृत मानसिकता को जन्म देने के लिए भी महिलाओं के स्वच्छंद सोच को जिम्मेदार माना जाता है। यदि किसी ने बुरी नजर से देखा तो उसकी नजर में दोष नहीं बल्कि महिलाओं के परिधान में खराबी निकाली जाएगी। यदि स्त्री तलाक की शिकार होती है तो वह पत्नी धर्म के निर्वहन में असमर्थ है और यदि वह पति को त्यागती है तो चरित्रहीन कहलाती है। देह का व्यापार करती है तो वेश्या है और बलात्कार की शिकार होती है तो उसके उद्दाम और स्वच्छंद वर्ताव को दोषी माना जाता है।

सर्वगुणसम्पन्न स्त्री के व्यवहार और वर्चस्व को देखकर और अपना काम उसके वगैर न चलता देख मनु महाराज ने भी 'न स्त्रीस्वातन्त्र्यमर्हति' लिख कर पहले तो स्त्री को पराश्रित बनाया फिर बड़ी समझदारी से 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता' कहकर उनकी, क्रोध, नाराजगी और विद्रोह से पुरुष जाति को बचा लिया। फिर पुरुषों ने स्त्री को वह स्त्री बनाया जो मात्र उसकी सुख–सुविधा

का ख्याल रख सके। प्रारम्भिक अवस्था में पारिवारिक अवधारणायें एवं आडम्बरों से रहित समाज को पितृसत्तात्मकता के साथ बंद एवं कट्टरता की नींव डाली और तथाकथित सुरक्षित समाज का नाम दिया। देवी का स्वरूप देकर पहले तो उसे भ्रमित किया गया और अच्छी भली स्त्री को मूर्ति के रूप में गढ़कर उसके गुणों और अधिकारों को पाषाण में जड़ दिया गया। उसकी प्राण प्रतिष्ठा इस तरह से की गई कि वह खुद ही समझ नहीं पाई कि उसके साथ जो हो रहा है वह सही है या गलत। स्त्रियों की रही सही ताकत इस्लामिक आक्रमणकारी एवं शासकों ने निचोड़ ली। न सिर्फ उनका शरीर बल्कि आत्मा को भी कालकोठरी में कैद कर रोशनी को उनके जीवन से सदा के लिए दूर कर दिया। देश, समाज और परिवार की इज्जत का बोझ उसपर लाद दिया गया और उसकी कोमलता का लाभ उठाते हुए उसे विवश किया गया कि यदि वह सिर उठाने की कोशिश करेगी तो उसका सिर शायद नहीं कटे परंतु समाज और परिवार का सिर लज्जा से सदा के लिए झुक जाएगा। स्त्री को दास बनाकर पुरुष मुखिया बना और उसे यह दासता गरिमापूर्ण लगे, इसके प्रति उसके मन में विद्रोह न हो इसलिए ममता, स्नेह, प्रेम, दायित्व, धर्म, कर्तव्य, शील आदि से उसे जोड़ दिया गया। शादी के लिए उम्र , शिक्षा और ज्ञान में पुरुष से स्त्री का कम होना अनिवार्य रखा गया ताकि उसपर शाषण करना आसान हो। सामाजिक, औपचारिक, नैतिक और धार्मिक शिक्षा देकर उसे स्त्री रूप में परिवर्तित किया गया तथा धर्म और कर्तव्य के दायरे में इस तरह कैद किया गया कि पुरुष और परिवार को खुश रखना ही उनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य बन गया। शायद इसलिए कहा गया है कि स्त्री पैदा नहीं होती है उसे बनाया जाता है।

हमारे ग्रंथकार और धर्मशास्त्रज्ञों ने स्त्री को मात्र दोष की खान बताया। साहित्य हो या इतिहास उसे वह स्थान नहीं दिया जिसकी योग्यता वह रखती है। यहाँ तक कि स्त्रियों को शूद्र की श्रेणी में डाल दिया। महादेवी वर्मा जैसी साहित्यकार को वेद पढ़ने के लिए इलाहाबाद के वेद के गुरुजी इसलिए मना किया कि वह एक लड़की थी और लड़की वेद का अध्ययन नहीं कर सकती। लिहाजा उनका संस्कृत का अध्ययन जारी नहीं रह पाया। विश्पला और रुशमा जैसी योद्धा नारियों या अपाला और गार्गी जैसी वेदज्ञ स्त्रियों के देश

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

में स्त्री को वेद पढ़ने का निषेध कितना उचित है? विद्वान एवं आलोचकों का पूर्वग्रहित दिमाग यह मानने के लिए तैयार नहीं होता कि वैचारिक, तर्कपूर्ण और निर्णायक मत रखने की क्षमता स्त्रियाँ भी रखती हैं। बौद्धिक चर्चा तथा वाद विवाद में एक तो उन्हें शामिल नहीं किया जाता और अगर मजबूरन शामिल करना पड़े तो गृहसज्जा तक उनकी भूमिका को सीमित रखा जाता है। गृहनिर्माण में उनका उल्लेख नहीं किया जाता। लज्जा, धैर्य, सब्र, दया, माया, आदि गुण रखते हुए भी वीरता या पौरुषेय गुण जिनमें मर्द डींग मारे फिरता है और स्वयं को स्त्री से ऊपर रखता है उनमें भी ये पीछे नहीं रही है। चाँद सुल्तान, अहिल्याबाई, बैजाबाई, के साथ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई जैसी स्त्रियाँ न सिर्फ रणबाँकुरी हुईं बल्कि राजनीति और नीति में भी अपनी योग्यता साबित की हैं। स्त्रियों को जब भी अवसर मिला है पुरुषों से बेहतर सिद्ध हुई हैं। पढ़ाई लिखाई हो या अन्य क्षेत्र कहीं भी वह पीछे नहीं है। इस बात को भी नकारा नहीं जा सकता कि स्त्री धर्म और दया की मूर्ति होती है। वह धर्म की रक्षक भी है। हिंदू धर्म इन तथाकथित अबलाओं की दया पर ही टिकी हुई है। स्त्री की वास्तविक स्वरूप, उसका अस्तित्व, उसकी परंपरा, अतीत, स्मृति आदि से अवगत होना नई पीढ़ी का धर्म है। भूत से प्रेरणा लेकर भविष्य को सुधारा जा सकता है। इतिहास में भले ही स्त्रियों की शौर्य गाथा का बखान कम मिले पर पौराणिक स्त्रियाँ स्त्री की स्वाधीनता एवं स्वायत्तता का परिचय दिलाने के लिए काफी है।

हम जानते हैं कि जब भी अवसर मिला है विभिन्न क्षेत्रों में महिलाएँ पुरुषों से बेहतर सिद्ध हुई हैं। वह अपनी ताकत और सूझ बूझ से घर और बाहर सभी दायित्यों का निर्वहन आसानी से कर सकती है जो पुरुषों के लिए कठिन है। शायद यही असुरक्षा का बोध पुरुषों का स्त्रियों को उचित अवसर प्रदान करने से रोकती है। छोटी इकाई हो या बड़ी संस्था, प्रतिभा सम्पन्न होते हुए भी स्त्रियों को मुखिया चुनने में आज भी पुरुष अहम् को धक्का लगता है। उनके अंदर काम करना उन्हें गँवारा नहीं होता। फलस्वरूप स्त्री वर्षों एक पद पर काम करती रहती है और उसके साथ काम करने वाले कहीं से कहीं पहुँच जाते हैं। उसके गुणों को सही दिशा देने के बजाय परंपरा, सभ्यता, संस्कृति, शील, अपमान आदि से जोड़कर उसकी

प्रतिभा को ग्रहण लगा दिया जाता है। ऐसी कौन सी संस्कृति है जो अपने संवाहकों को परतंत्र बनाता हो। भारतीय संस्कृति का इतिहास तो ऐसा नहीं कहता।

हम जिन पाश्चात्य देशों से अपनी तुलना करते हैं और उनकी बुराई करते नहीं थकते उन देशों में समानता का यह हाल है कि स्त्री अपने प्रति दयादृष्टि को बर्दाश्त नहीं कर सकती। कई यूरोपीय देशों में पुरुषों के द्वारा स्त्री के लिए बस, ट्रेन या किसी भी सार्वजनिक स्थल पर स्थान खाली करना उन्हें स्त्रीत्व की तौहीन लगती है। बराबरी में विशेषाधिकार को वे नहीं मानती। उन देशों में भी पहले स्त्रियों की हालत कोई बेहतर नहीं थी। काफी जद्दोजहद के बाद इन्होंने अपनी आजादी और समानता का अधिकार कमाया है। सभ्यता और संस्कृति की दुहाई देते हुए हाथ पर हाथ धरे नहीं बैठीं। हमारे अंदर की हीनता हमें स्वयं को कमजोर और पाश्चात्य सभ्यता को बेहतर मानकर उनपर अपना दोष मढ़ना चाहती है। जबकि सच्चाई यह है हम उनसे कहीं बेहतर और उन्नत सभ्यता से जुड़े हुए हैं। पौराणिक स्त्रियाँ एवं भारतीय सोच उनसे कहीं आगे है। हमारी हीन भावना ने उन्नति के पथ में रोड़ा अटकाने का काम किया है। पाश्चात्य सभ्यता से तुलना कर हम स्वयं को कमजोर सिद्ध करते हैं। इतनी तरक्की के बाद भी भारत में कितनी महिलाएं प्राचीन स्त्रियों के बराबर खड़ी हो पाई हैं। आज स्त्री जमीन आसमान एक जरूर कर रही हैं परंतु नंबर अभी भी उंगलियों पर गिनी जा सकती हैं। सभ्यता और संस्कृति की दुहाई देकर स्त्री को कटघरे में खड़ा करना उनकी तरक्की में बाधा डालना है। भारतीय स्त्री को अन्य सभ्यता का अनुकरण करने की आवश्यकता नहीं है। अपने पूर्वजों का अनुकरण कर ले उतना काफी है। स्त्री जननी है और जननी विनाशक नहीं हो सकती। भारतीय संस्कृति की आधार स्त्री है। संस्कृति के विनाश का जड़ इस आधार को कमजोर करना होगा न कि इसे सुदृढ़ करना। स्त्री आनुवंशिक रूप से संस्कृति की पोषक है न कि संहारक।

कृति–चर्चा

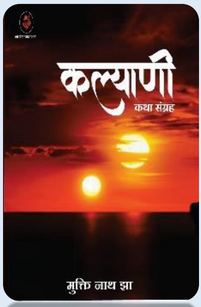

मानवीय जीवन की उद्दाम कहानियां

कल्याणी (कथा संग्रह), मुक्तिनाथ झा, शतरंग प्रकाशन, लखनऊ

सुरेंद्र अग्निहोत्री
ए–305, ओ.सी.आर. बिधान सभा मार्ग, लखनऊ
मो. : 9415508695

शतरंग प्रकाशन द्वारा प्रकाशित मुक्तिनाथ झा का कल्याणी कथा संग्रह में बारह कहानियां संकलित हैं। मुक्तिनाथ झा की अधिकांश कहानियां गांव की पारंपरिक परम्परा के बीच धार्मिक आख्यानों और चरित्रों को सहकार कर मानव जीवन को उत्कर्ष बनाने की आकांक्षाओं को रेखांकित करनेवाला एक अनुपम कथा संग्रह है ।इस कथा संग्रह में लेखक हमेशा की तरह उड़ान भरता सा एक नए युवक के रूप में पुराने क्लासिकल धार्मिक संदर्भों की गंध में लिपटा लेकिन उसका नवीनीकरण करता अपने लक्ष्य को साधने के लिए किस्सागोई प्रवृत्ति से परिपूर्ण दिखाई देता है। मुक्तिनाथ झा की कहानी पहलवान की 'पांचवी ललकार' पढने पर एक अद्भुत चाक्षुष सुख देने वाला पहलवान

का चित्र उभर कर आता है जो अपनी संपूर्ण जीवन अपने आदर्श की संरचनाओं   के लिए मूर्त करने के लिए लगा देता है जहां स्वयं को ही भूल जाता है । भतीजे का लालन पालन बेहद संजीदगी के साथ विशेषताओं और उपलब्धियों से परिपूर्ण करने में अपना जीवन समर्पित कर देता है। लेकिन जीवन के अंतिम क्षणों में खुदगर्जी के हुजूम में मिले उपेक्षा और परिहास पर पहलवान के मन उपजी तल्खी चीत्कार बनकर पांच वीं ललकार के रूप में प्रकट होती है तो चमत्कृत कर देती है। इस कहानी का ध्येय कथ्य शैली की सारी बनी बनाई जमीन से मुक्त स्वतंत्र होने के कारण महत्वपूर्ण है। इस कहानी के साथ इस कथा संग्रह की दूसरी कहानी 'बीजोरानी का टीला' आम जीवन और ग्रामीण जीवन की जद्दोजहद के बीच प्रेम और करुणा को रेखांकित प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करती है।वस्तुतः इस कहानी के माध्यम से लेखक ने यह बताना चाहा है कि, इन्सान जीवन में ज्यों–ज्यों दैवी–दण्ड पाता है, त्यों–त्यों वह मानवतावादी बनता जाता है। एक अन्य कहानी 'कपोत दम्पत्ति' वीभत्स त्रासदी पर आधारित है, किन्तु इसका अंत सुखद् एवं आशापूर्ण है। पात्रों के स्तर पर मुक्तिनाथ झा अपने कथ्य–सृजन में काफी संयम दिखाते हैं। उनके यहाँ पात्रों के सहारे संपूर्ण कथानक का संघटन तैयार करते हैं।

इस प्रकार संपूर्ण कथानक कहानी तत्व के भावपक्षीय सभी वैशिष्ट्यों के प्रति वर्णतः खरा उतरता है। 'पिता' कहानी एक बंधी–बंधायी परिपाटी पर आगे बढ़ती है। यद्यपि कि बीच–बीच में मुक्तिनाथ झा ने अपने मनोभावों के उद्गार हेतु अवकाश की पूर्ण गुँजाइश भी रखी है। भाव चाहे जितने गहाराई लिए हों, तीव्र उत्कट हों, मर्म को भेदने वाले हों, किन्तु यदि उनका प्रकटीकरण सम्यक् दृष्टिकोण से न हो तो सब व्यर्थ है। वस्तुतः भावों का प्रकटीकरण जिन उपादानों के माध्यम से होता है, वे सब शिल्प–विधान के अन्तर्गत आते हैं। जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है। काव्यात्मक शिल्प–विधान कहानियों में घुसपैठ कर चुके हैं। इस संदर्भ में नामवर सिंह की चिंता उचित प्रतीत होती है। उनकी मूल चिंता कहानी के 'किस्सागोई शैली' की रक्षा को लेकर है। जहाँ तक कहानीकार मुक्तिनाथ झां का सवाल है तो उन्होंने शिल्प विधान में विशेष मौलिकता

दिखाने के बजाय उत्कृष्टता पर विशेष बल दिया है। वस्तुतः लेखक ने 'किस्सागोई' शैली को पूर्णता निर्वहन करने की कोशिश की है। 'पेंशन' कहानी अपने शिल्पगत प्रयोगों को लेकर भी पूर्णतः सार्थक रचना है। मुक्तिनाथ झां ने अपनी स्वाभाविक शैली में ही इसका भी शिल्प रचा है। भाषा बिल्कुल सहज, सरल, एवं भावमय है। शैली में वातावरण के अनुसार काफी विविधता आती गयी है।

लेखक के लिए साफ सुथरा एवं त्रुटिहीन व सरल तथा सहज शिल्प ही अभीष्ट है। अपनी इन्हीं मान्यताओं के आधार पर लेखक मुक्तिनाथ झां ने भाषा का अत्यंत सहज स्वरूप चुना। 'अमृत संवाद में कथोपकथन भी कहानी में बेजोड़ हैं। छोटे–छोटे वाक्यों में पात्रों द्वारा आपसी वार्तालाप बिल्कुल जींवत प्रतीत होता है। 'मिथ्या' कहानी का शिल्प भी मुक्तिनाथ झा जी साधारण से परंपरागत स्वरूप में ही निर्मित करते हैं। भाषा का प्रयोग एकदम अपने चिर–परिचित अंदाज में हुआ है। ग्राम्य–अंचल के परिवेश में भी भाषा का शुद्ध खड़ी बोली का स्वरूप हुआ है। यह अलग बात है कि आंचलिक परिवेश में प्रचलित कुछ शब्द अपने देशज स्वरूप में ही प्रयोग किए गए हैं।

शेखर जोशी की कहानियों में
हाशिये का समाज
इबाहुन मॉन
आईएसबीएन : 978-81-945460-6-1
संस्करण : 2020, मूल्य : 200/-

कृति–चर्चा

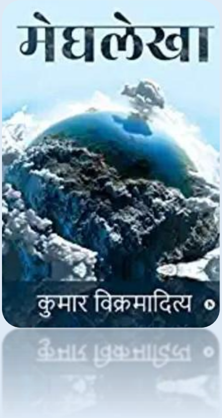

शब्द–सामर्थ्य, प्रकृति–चित्रण और ऋतु–ज्ञान का अद्भुत समागम

मेघलेखा (काव्य), कुमार विक्रमादित्य, नोशन प्रेस

विजय कुमार तिवारी
भुवनेश्वर, उड़ीसा, मो. 9102939190

हमारे जीवन में साहित्य जरूरी है। साहित्य तभी है, जब लोगों में पढ़ने की रुचि हो। केवल रुचि का होना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उसमें उत्तरोत्तर संवर्धन की संभावना हो। इसका व्यावहारिक पक्ष किंचित जटिल है परन्तु रचनाकार और साहित्य–चिंतक यथार्थ को समझते हैं। स्वान्तःसुखाय की भी भूमिका होती है,साथ ही यह निर्विवाद सत्य है,जो किसी एक को अच्छा लग रहा है वह सबको नहीं, तो भी बहुतायत को अच्छा लगता ही है। इससे असहमत या सहमत होना, कोई आवश्यक नहीं है क्योंकि साहित्य की कोई न कोई विधा हर किसी को प्रिय होती ही है। साहित्य में काव्य एक महत्वपूर्ण विधा है

और विशाल पाठक–श्रोता वर्ग आनंदित होता है। पाठक और अध्येता की सहूलियत के लिए साहित्यिक कृति की समीक्षात्मक विवेचना की जाती है। विद्वतजन और साहित्य–चिन्तक कृति के गुण–दोष, श्रेष्ठ–अश्रेष्ठ जैसे तत्वों को आधार मानते हैं और भाषा–शैली व प्रवाह का चिन्तन करते हैं। थोड़ा विस्तार देते हुए कहना है,समीक्षक को भी समाज में, देश में, लोगों में हो रहे बदलाओं की समझ होनी चाहिए। आज के लेखन को समझने के लिए नये–नये समीक्षात्मक तत्वों, हथियारों की आवश्यकता है। पुराने भोथरे हथियार से काम चलने वाला नहीं है। इसके लिए खुले मन से विमर्श और लेखन की आवश्यकता है। सुखद है कि साहित्यिक चिन्तकों का ध्यान है और प्रश्न खड़े हो रहे हैं। इन बातों के लिए किसी विवाद की आवश्यकता नहीं है बल्कि इसे सुझाव के रुप में लिया जाना चाहिए।

पुत्र और मां के बीच संवाद–शैली में लिखा यह काव्य 'मेघलेखा' अपनी तरह से पाठकों, अध्येताओं और काव्य प्रेमियों को आकर्षित और प्रभावित कर रहा है। कुमार विक्रमादित्य ने इसे अपना छोटा सा प्रयास माना है। साहित्य जगत के द्वारा खुले मन से इसका स्वागत किया जाना चाहिए बल्कि उनके भीतर की काव्यात्मक भावनाओं के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। उन्होंने काव्य–सृजन के शुरु में छोटी सी भूमिका में लिखा है, मैंने कोशिश की है, मेघ और वसुधा के सम्बन्ध को सूत्र में बाँधने का। मेघ के रुठने से दुनिया हाहाकार करने लगती है। मां वसुधा, अपने पुत्र मेघ का आवाहन करती है और उसे उसके वास्तविक स्वरुप व कर्म का परिचय देती है, उसकी महत्ता का बखान करती है और कर्तव्य–बोध करवाती है। वसुन्धरा मेघ से पूछती है, 'किसने तुम्हारी मति को भ्रष्ट किया है ? तुम क्यों रुठ गये हो ? वह धरती पर रहने वाले जीवों, वनस्पतियों की दशा–दुर्दशा बतलाती है और प्रेम पूर्वक आग्रह करती है, 'हे पुत्र मेघ! शीघ्रातिशीघ्र अपने सम्पूर्ण ऐश्वर्य के साथ आ जाओ और सभी जीव–जन्तुओं, प्राणियों, वनस्पतियों को जीवन प्रदान करो।'

कुमार विक्रमादित्य ने लिखते हैं कि प्रस्तुत काव्य को मैंने छः खण्डों में बांटकर सम्बन्धों को पिरोने की कोशिश की है। प्रथम सर्ग 'विनती' में मां वसुधा, पुत्र मेघ से विनती करती है। द्वितीय सर्ग

'याचना' में जलधर से याचना करती है। तृतीय सर्ग 'एहसास' में मेघ को अपने कर्तव्यों और गल्तियों का एहसास होता है, पछतावा होता है। चतुर्थ सर्ग 'गर्जन' में मेघ गर्जना करता है। यह संकेत है कि अब बरसात होगी और सबकी प्यास बुझेगी। पंचम् सर्ग 'वर्षण' में वर्षा प्रारम्भ होने वाली है। अंतिम षष्ठ सर्ग 'हर्षण' में मेघ जल बरसाते हैं। धरती की प्यास बुझती है और चतुर्दिक खुशियाँ व्याप्त हो रही हैं।

कुमार विक्रमादित्य की काव्य चेतना जाग गयी है और उन्होंने अपने चिन्तन को ऐतिहासिक सन्दर्भ से रेखांकित करने का प्रयास किया है। कहीं न कहीं इस तरह के सृजन की प्रेरणा महाकवि कालिदास विरचित 'मेघदूत' से मिली होगी या उनके चेतन–अवचेतन में ऐसा ही कुछ रहा होगा। हालांकि दोनों काव्य–ग्रंथों में कहीं कोई समानता नहीं है। किसी भी तरह से, मेरा कोई आशय नहीं है कि कुमार विक्रमादित्य की या उनकी काव्य–कृति की तुलना करूँ। हाँ, वर्तमान समय में कवि, लेखक और उपन्यासकार के रुप में विद्वतजन निश्चित ही उनके लेखन पर विचार करेंगे। उन्होंने अपने इस काव्य लेखन के लिए संवाद–शैली का सहारा लिया है। पहले भी ऐसा कोई काव्य, ऐसी शैली में लिखा गया है, मेरी जानकारी में नहीं है। यदि हो, तो भी उनके इस प्रयोग की सराहना होनी चाहिए। काव्य के गुण–दोषों के आधार पर देखा जाय तो इसे उनका प्रथम प्रयास मानकर, प्रोत्साहित करने का भाव अपनाना चाहिए। यहाँ संवाद हो रहा है, कथ्य–कथानक महत्त्वपूर्ण हैं, परन्तु कवि के भीतर की अनुभूति लायक सम्यक भाव–शब्द कम प्रयुक्त हो पाये हैं, पकने तक प्रतीक्षा होनी चाहिए थी। इसका आशय यह भी नहीं है कि काव्य कमजोर या मजबूत होना चाहिए। मेघलेखा काव्य है और निश्चित ही हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने में इसकी अपनी भूमिका होगी।

काव्य की पृष्ठभूमि यही है कि धरती प्यासी है,उस पर पल रहे जीव–जन्तु, वनस्पतियाँ सभी त्रस्त हैं,ऐसे में मां धरित्री,वसुन्धरा जल बरसाने वाले पुत्र मेघ से विनती करती है, 'हे जीवन देने वाली बूँदों की थाली! मैं भूखी हूँ, संसार भूखा है, सागर भूखा है और सारे ताल–तलैया सूख गये हैं।' अपने आश्रितों की दुर्दशा देख, धरती स्वयं को कोसती है। मेघ कहता है, 'स्वयं को मत कोसो, तुम्हारा कोई दोष

नहीं है। अपने आश्रितों से पूछो, क्या उन्हें तुम्हारी चिन्ता है?' वसुन्धरा की उलझन, वांछा या आकांक्षा वाले प्रश्न पर मेघ उत्तर देता है, 'हाँ, तुम्हारा दुख और प्रजा का हाल देखकर उलझन में हूँ।' वसुन्धरा मेघ की प्रशंसा करती है, अपने आश्रितों का हाल सुनाती है और पूछती है, 'हे मेघ! क्या कोई द्वन्द्व है ? कोई भटकन या अनबन है ?' मेघ ना में उत्तर देता है। धरती विश्वामित्र और वशिष्ठ का आख्यान सुनाती है और बादल को नादान कहती है। मेघ अपने को नादान नहीं मानता। धरती आद्रा, मघा, रेवती सहित अनेक नक्षत्रों में मेघ की गतिविधियों की चर्चा करती है, और कहती है कि तू तो सबका प्राणदायी है, देख, चारो ओर हाहाकार मचा है। धरती, पहाड़, नदी सर्वत्र मरघटी वातावरण दिखाई देता है। भगवान को चढ़ाने वाले फूल भी नहीं खिलते। हे मेघ! तुम अपनी बूँदें बरसा दो। मेघ अधिकार की बात सुनकर कहता है, 'क्या किसी ने मेरी इच्छाओं के बारे में सोचा है ?'

वसुन्धरा अपनी कहानी सुनाती है, पिता—पुत्री के संवाद की याद दिलाती है। देवताओं के प्रस्ताव को मैंने माना था। चाँद अपना कर्तव्य निभा रहा है। मेघ खुश होता है। धरती देवासुर संग्राम की चर्चा करती है, कहती है, मैं रत्नगर्भा हूँ, सबको देती हूँ और संतुलित जीवन की सलाह देती हूँ। मेघ कहता है कि मैंने भी तो दिया ही है। वसुन्धरा नाना विधि बताती है कि देखो, सब कुछ रुक—सा गया है। हरियाली नहीं है। जीवों का नृत्य बंद है। गंगा सहित नदियाँ सूख गयी हैं। मेरे सारे अलंकार नष्ट हो गये हैं। मेघ कहता है, 'मैं तुम्हारी बातों को समझ रहा हूँ।' वसुन्धरा नये—नये उदाहरण देती है। मेघ कहता है, दुख ही प्राणी को जीने सिखाता है। धरती आरुढ़ यौवना की बात बताती है कि अब वह अपने प्रियतम से मुख मोड़ ले रही है। अब तरुण—तरुणियों के बीच प्रेम—लीलाएं नहीं होतीं। जिनकी दहाड़ से सब डरते थे, अब उनकी आवाज नहीं निकलती। मेघ कहता है, 'जब तक जीवों का ज्ञान जागृत नहीं होगा, मैं नहीं आने वाला।' धरती सुनाती है, 'अब कोई किसी से नहीं डरता है, सबके अपने ही जीवन के लाले पड़े हैं।' मेघ कहता है, 'लोगों को जल का महत्व सीखना होगा। मैं तो प्रेम का अभिलाषी हूँ।' धरती मेघ को बहुविध

समझाती है। कहती है, 'तुम तो इतने निर्मोही नहीं थे ? तुम्हारे बरसते ही धरती में अंकुर फूट पड़ेंगे।' मेघ कहता है, 'कुछ दिन और तपने दो प्राणी को, मेरा महत्व समझने दो। विश्वास करो, मैं आऊँगा।' यह विनती प्रसंग अद्‌भुत है। संवाद खूब गहरे भाव के साथ हैं और भाषा–प्रवाह बना हुआ है। संस्कृत, हिन्दी, भोजपुरी और मैथिली के शब्द और भाव भरे पड़े हैं।

कुमार विक्रमादित्य ने 'मेघलेखा' के इस द्वितीय सर्ग को 'याचना' के रुप में मार्मिक भाव से प्रस्तुत किया है। धरती विनती करके थक गयी है, अब पुत्र मेघ से याचना करती है, 'हे मेघ! जो मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं, उन्हें कोई कंधा देने वाला नहीं है, कोई किसी का क्रंदन नहीं सुनता, कब तक परीक्षा लोगे ? क्या तुमने जीवों को कष्ट देने की कसम खाई है ? अब उन सभी जीवों का उद्धार करो।' कवि ने संस्कृत के शब्दों से काव्य को किंचित दुरूह किया है, साथ ही अपनी काव्य–कला का परिचय दिया है। साहित्य में पुनरुक्ति की समस्या खड़ी होती है, कवि को सावधान होना चाहिए। वैसे सन्दर्भ–चिन्तन में इसे गौण माना जा सकता है। धरित्री सूचित करती है, सभी देव विराजमान हैं विष्णु पुरी में, कहीं कोई कुपित न हो जाए। प्राणियों के बारे में पूछने पर क्या उत्तर दूँगी ? स्वर्ग–वधू तुम्हें देखकर विस्मित है। क्या तुमने स्वर्ग की अप्सराओं के स्वप्नों के बारे में सोचा है ? बहुत सी आत्माएं अपनी उत्पत्ति के लिए शरीरों की खोज कर रही हैं। कहीं स्वस्ति वाचन नहीं हो रहा है। वनदुर्गा आशा के साथ तुम्हारे बरसने की प्रतीक्षा में है। छोटी मुनिया पूछ रही है, क्या आँगन में मेघ आयेगा ? मैं चीख–चीखकर कह रही हूँ, मत उजाड़ो अरण्य, वन को। अपने हित की रक्षा करो, जंगल का हितैषी बनकर।' मेघ उत्तर देता है, 'हे धरती मां! मैं अपना दर्द कैसे बताऊँ ? मैंने देखा है समस्याओं के अम्बार लगे हैं, मनुष्य भक्षक बना फिरता है, प्राणियों का भक्षण करता है और स्वार्थ में जीवों का शोषण करता है।'

तीसरा सर्ग 'एहसास' है। वसुंधरा पूछती है, 'तू कैसे निष्ठुर हो गया है ? मैंने बहुतों को जन्म दिया, परन्तु तुम्हारे समान कोई दूसरा नादान नहीं देखा। तुम प्रेम नहीं समझते, हठ कर रहे हो। तुम मेरे हो परन्तु पहले जैसी बातें जम नहीं रही हैं। तुम भी भोजन के

बिना सूख गये हो। हठ करना पुरुषोचित नहीं है,वह नारियों का लक्षण है। जब से तुम्हारे रथ गतिमान नहीं हैं,जीव मिट रहे हैं। धरती पर जीवन नहीं रह गया है। बिना फूलों के वृक्षों को देखकर तुझे कोई एहसास नहीं होता ? क्या तुम्हें सावन की याद नहीं आती ? धरती कहती है, मुझे प्रबल विश्वास है, तुम निर्मम नहीं हो सकते। तुम घनीभूत होते थे, काली बदली छा जाती थी। अब लौट आओ, अपनी भूल को स्वीकार करो। तुम्हीं सर्वत्र जलसिक्त कर सकते हो। तरुणियाँ गा–गाकर थक चुकी हैं। तेरे वियोग में कमलिनी ने खिलना बंद कर दिया है। धरती पर सबके घमंड टूट चुके हैं। याद करो, पवन बहता था, भीनी खुशबू आती थी, नदियाँ निर्मल हो बहती रहती थीं। वन तुलसी की गंध फैलती थी, हरसिंगार की कलियाँ सजती थीं। अब सब दुखी हैं,सम्पूर्ण सृष्टि दुखी है। सबका ऐश्वर्य, सौन्दर्य तुमने छीन लिया है। कभी तुम मर्द की तरह सीना चौड़ा करके चलते थे, अब शर्म करते चलते हो।' मेघ कहता है, 'मैं सब कर दूँगा, बहा दूँगा, जल बरसा दूँगा।' धरती किंचित खुश होती है। मेघ कहता है, अब किसी को कोई कष्ट नहीं रहेगा। मेघ को अपनी भूल का और धरती पर पसरे दुख का एहसास हो गया है।

काव्य का चौथा सर्ग 'गर्जन' है। बादल गरजते हैं तो उम्मीद होती है कि बरसात होगी। यह संवाद उम्मीद जगाने वाला है। वसुन्धरा का भाव–विचार सब बदल रहा है। स्वर और वाणी के प्रवाह में संभावनाएं भरी हुई हैं, लयात्मकता के साथ धरती मुखरित हो रही है, 'हे मेघ! अब देर मत कर। शीघ्र जल बरसा। शीतलता का संचार कर।' माता वसुन्धरा पुत्र मेघ का नाना उदाहरणों से पुरुषार्थ जगाना चाहती है, उसकी सामर्थ्य को याद दिलाती है, ललकारती है। बादल कहता है, 'यदि कोई मेरी खबर ले तो मैं चारों पहर आऊँगा और अपना कल्याणी तेवर दिखाकर सबकी लालसा पूरी करूँगा।' धरती कहती है कि अब अपनी जलराशियाँ उलीच दे। देख, सभी तेरी वंदना में खड़े हैं। मेघ कहता है कि मेरी रणभेरी बज चुकी है। मुझे पता है कैसे युद्ध जीतना है। हे मां! तू अब चिन्ता मत कर। भले ही मैं रूठा था, परन्तु टूटा नहीं हूँ। अभी भी मुझमें तुम्हारी दी हुई शक्तियाँ भरी हुई हैं। अब करतल ध्वनि से मेरा अभिनंदन करो और अपने प्राणियों

से कहो कि मुझसे अपनी सुरक्षा करें। धरती मेघ के लिए बार–बार प्रशस्ति–गीत गा रही है। मेघ कहता है कि मेरी ध्वनि की चाल देखकर कोई हैरान मत होना। धरती मगन है, कहती है कि मेघ अब सज रहा है। हे जीवों! अब होशियार हो जाओ, सावधान रहो। मेघ उमंगों से भरा हुआ है और गर्जना कर रहा है। धरती प्रसन्न हो हुंकार भरना चाहती है परन्तु उसे अपने प्रियजनों की चिन्ता है।

पाँचवाँ सर्ग 'वर्षण' का है। वसुन्धरा मेघ को संदेश देती है कि यहाँ उमंग है, उत्साह है, खिली हुई कलियाँ नव ताल, लय पर नृत्य कर रही हैं। चतुर्दिक नृत्य–संगीत का वातावरण है। वर्षा के प्रभाव का विस्तार से, धरती वर्णन करती है और हरेक स्पंदन की चर्चा करती है। हाहाकार के सारे भाव–शब्द तिरोहित हो गये हैं। अब उत्साह, उमंग, हरियाली, खुशी के शब्द गूँज रहे हैं। मेघ की गर्जना से इन्द्रासन में खलबली मच रही है। पूरे काव्य में कुमार विक्रमादित्य ने अलंकारिक भाषा के साथ अलंकारों का बहुतायत प्रयोग किया है। प्रेमियों की चितवन, प्रगल्भता, हास–परिहास से सबका जीवन आनंदमय हुआ है। चतुर्दिक बिजलियाँ चमक रही हैं। मेढक–मेंढकी, मोर–मोरनी अन्तर्मन को रिझा रहे हैं। हर्षित, पुलकित होकर एक–दूसरे को प्रेम का संदेश दे रहे हैं। तितलियाँ, मछलियाँ और सारे कीट–पतंगें हुलसित हो रहे हैं, आनन्द में हैं। नेवले, सर्प आदि सभी जन्तु अपने–अपने बिलों से बाहर निकल आये हैं और अपने स्वभाव का परिचय दे रहे हैं। सम्पूर्ण धरती पर चहल–पहल शुरु हो गयी है। सब में नव जीवन,नया उत्साह है। किसान हल–बैल लेकर खेतों की ओर निकल पड़े हैं। खेतों में पौधे लहरा रहे हैं। कवि धीरे–धीरे वर्षाकाल के सारे चित्रों को उभार रहे हैं, दिखा रहे हैं। कभी धीरे वर्षा होती है,कभी रिमझिम फुहार पड़ती है और कभी घनघोर बरसात होती है। लताएं, फूल और हरियाली से प्रकृति सज गयी है। फलस्वरूप मन, धरा, निशा, उषा सब शान्त हैं और आकाश, हृदय, दिवा, सन्ध्या सब अशान्त हैं। मेघ कहता है, 'हे मां! मैंने तेरी विनती का मान–सम्मान किया है। अब तू भी मुझे स्नेह से भरकर क्षमादान कर दो। तुम्हारे भीतर की करुणा को समझ नहीं पाया था और हठ कर बैठा। मैं गुमान में था, कर्तव्यों को भूल गया था और सम्बन्धों को भी, परन्तु

मां! तुझे नहीं भूला था। तुम्हारी बातों ने मेरे भीतर की करुणा को जगा दिया है। हे मां! मुझे अमरत्व का वरदान दो ताकि हर पल, हर क्षण तुम्हारे काम आ सकूँ।'

'हर्षण' मेघलेखा काव्य का अंतिम सर्ग है। वसुन्धरा और मेघ के बीच का संवाद बहुत सुन्दर और मनोहारी है। धरती खुश होकर मेघ को सुना रही है, 'जीवों के अधरों की मुस्कान को देखो। सब लोग तुम्हारे स्वागत के लिए तैयार हैं और विरह–राग गा रहे हैं। आज सारा संसार बिहँस रहा है। सर्वत्र शीतलता व्याप्त हो रही है। छोटे–छोटे पौधे अपनी डालियों को झुकाकर तेरी धाराओं का स्पर्श कर रहे हैं। सखियों संग सभी पानी–खेल खेलना चाहती हैं। हे जलधर! तुम्हारा प्यार पाकर मैं बहुत हर्षित हूँ, स्वयं पर गौरवान्वित हो रही हूँ। विद्युत तरंगें बादलों के बीच छिप रही हैं जैसे जीव घरों में छिपता है। हे मेघ! जब तक मेरा जीवन रहेगा,मैं तुमसे हमेशा विनती करूँगी। जहाँ भी जाना होगा, जाऊँगी और यमराज से भी अपने पुत्रों के लिए प्राण छिन लाऊँगी।' मेघ प्रसन्न होता है, कहता है– 'धरती, नदी, आकाश, दरिया, तन–मन सब हर्षित है, मां भी हर्षित है और मैं भी हर्षित हूँ। मां के हर्षित मुखमण्डल को देखकर आज मैं आनन्द में हूँ।'

कुमार विक्रमादित्य के इस प्रयास की सराहना होनी चाहिए। काव्य शास्त्र की कहीं–कहीं, सीमाएं जाने–अनजाने टूटती सी दिखती हैं। छन्द शास्त्र पर मेरा कोई विशेष अनुभव नहीं है फिर भी भाषा–प्रवाह ध्यान आकर्षित करता है। शब्द–चयन प्रवाह को कई बार प्रभावित करता दिखता है। संस्कृतनिष्ठ शब्दों की भरमार है और उपसर्ग बहुतायत प्रयुक्त हुए हैं। कभी–कभी काव्य बोझिल होता हुआ दिखाई देता है। दूसरी ओर कुमार विक्रमादित्य जी का शब्द–सामर्थ्य, प्रकृति–चित्रण और ऋतु–ज्ञान अद्भुत है। वर्षाकाल में और वर्षा–रहित काल में भू दृश्यावली और मौसम की गहरी समझ कवि को है। कठिन या व्यवहार में कम प्रयुक्त होने वाले शब्दों का अर्थ पाठकों की सुविधा के लिए उसी पृष्ठ पर डाला जा सकता है।

कृति–चर्चा

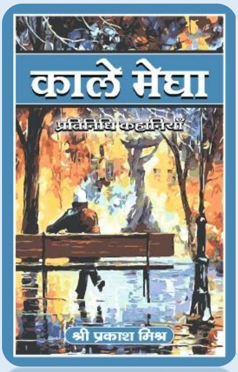

साथ चलती कहानियों का संग्रह

काले मेघा (कहानी संग्रह), डॉ. श्री प्रकाश मिश्र, दिव्यांश पब्लिकेशंस, लखनऊ

डॉ. राजेश तिवारी
सहायक प्रोफेसर (हिंदी), ग्रामोदय आश्रम पी जी कॉलेज, सया, अंबेडकरनगर
मो. 9450764985

डॉ. श्री प्रकाश मिश्र की कहानी संग्रह 'काले मेघा' पढ़ना किसी शहर के किसी मोहल्ले से गुजरने जैसा है, जहां अनेक गलियों में तरह–तरह के मकानों में किस्म–किस्म के लोग रहते हैं। यहां अनेक चरित्रों से परिचय होता है। कहानी पढ़ते–पढ़ते कहानी के पात्र कहानी से निकलकर कब समीप में खड़े हो जाते हैं, बोलने–बतियाने लगते हैं, पता ही नहीं चलता। कुछ देर बाद जब ये चरित्र अपनी कहानियों में वापस लौटते हैं तब पाठक के मन में छोड़ जाते हैं कुछ भ्रमित से सुख, मन भर दुःख, कोई असहाय क्रोध, रक्तबीज सी चिंताएं और कभी स्वयं के जैसे कई प्रश्न चिन्ह।

इस संग्रह में कुल पंद्रह कहानियां हैं। पहली कहानी शीर्षक कहानी 'काले मेघा' है। यह कहानी सामंती युग की याद दिलाती है। गांव का पूर्व जमींदार और वर्तमान प्रधान तेजपाल खल चरित्र है। वह गांव की बहू–बेटियों पर बुरी नजर रखता है तथा मदद के बहाने गांव के गरीब लोगों का शोषण करता है। गांव की नवविवाहिता बहू तुलसी, तेजपाल की वासना में उसका साथ देने से मना कर देती है। तुलसी से अपने अपमान का बदला लेने के लिए वह गांव में काले मेघा खेल का आयोजन करने का निर्णय लेता है। काले मेघा क्या है ? क्या तेजपाल अपने इरादे में सफल होता है ? कहानी की नियति क्या है ? इन प्रश्नों के उत्तर इस पुस्तक में ही मिलेंगे। गांव की सौंधी महक से सुवासित इस कहानी में रोचकता अंत तक बनी रहती है। पात्रों, घटनाओं और परिस्थितियों के अनुसार भाषा तथा शैली के प्रयोग से कहानी आकर्षक हो गई है। संग्रह की दूसरी कहानी 'व्हाट्सऐप' है। आधुनिक पृष्ठभूमि पर रचित यह कहानी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं, रुचियों और अहं के कारण दरकते रिश्ते की कहानी है। कहानी के नायक सार्थक का उसकी पत्नी विशाखा से सम्बंध समाप्त हो जाने की सीमा तक खराब है। उन दोनों से एक बेटी है जिसकी परवरिश के लिए वे एक छत के नीचे रहते भले हैं पर उनके कमरे अलग हैं। एक दिन अचानक सार्थक को उसकी पूर्व छात्रा तबस्सुम का व्हाट्सऐप आता है। तबस्सुम बातों–बातों में उन्हें ये बताती है कि उसे उन पर क्रश है। पत्नी की अवहेलना और अकेलेपन से ग्रसित सार्थक तबस्सुम की ओर झुकते चले जाते हैं। कहानी का शिल्प सुंदर है। संवादों की बनावट को बहुत सहज और स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

'मुकम्मल इश्क की अधूरी दास्तां' कहानी भी उल्लेखनीय है। यह कहानी छात्र जीवन की प्रेम कथा है। उत्कर्ष और अपर्णा कॉलेज के दिनों में घटित कुछ विशेष घटनाओं के कारण एक दूसरे के निकट आते हैं और एक दूसरे से प्रेम करने लगते हैं। वक्त गुजरता रहता है। इसी बीच अपर्णा प्राथमिक विद्यालय में अध्यापिका हो जाती है जबकि उत्कर्ष एक कॉलेज में फिक्स वेतनमान पर अध्यापन कर रहा होता है। अपर्णा का अपने विद्यालय के सीनियर अध्यापक मुदित की

तरफ झुकाव होने लगता है। उसका उत्कर्ष की अस्थाई नौकरी में उसके साथ अपना असुरक्षित भविष्य देखना व्यावहारिक जीवन का एक कसैला सच है। छात्र जीवन तथा किशोर मानसिकता के प्रेम में व्यवस्थित की गई इस कहानी की कथावस्तु साधारण है किंतु इसका रचना विधान इतना रोचक है कि यह कहानी श्रेष्ठ पठनीयता से परिपूर्ण हो गई है। 'प्रेम जिसने कहानी न रची' एक एकांगी प्रेम कथा है। व्यवहारिक जीवन में भी अक्सर सहयोग और सहानुभूति को प्रेम समझ लेने की घटनाएं देखने को मिलती हैं। प्रेम की अधूरी कहानियों की महक दीर्घ जीवी होती है, वह वर्षों बाद भी उसी टीनशेड के नीचे लाकर नायक को खड़ा कर देती है जहां उसमें कभी प्रेम भाव का अंकुर फूटा होता है। वियोग प्रेम में खाद–पानी का काम करता है जिससे वह अधिक पुष्पित–पल्लवित होता है।

'हाई प्रोफाइल स्क्वॉड' कहानी पढ़ाई के लिए गांव से शहर आई एक सीधी–सरल लड़की के देह व्यापार के दलदल में धंसते जाने की करुण कथा है। न चाहते हुए भी पतन के रास्ते पर चल पड़ना और चाहकर भी लौट न पाना इस कहानी का कचोटने वाला संदेश है। लालच, महत्वाकांक्षा और ग्लैमर की चकाचौंध आखरि एक दिन छटपटाती जिंदगी को लील जाती है। 'घर वापसी' कहानी उस व्यवस्था का दस्तावेज है जिसमें आज का पढ़ा–लिखा युवा मोमबत्ती की तरह जल और गल रहा है। निजी संस्थानों द्वारा अपने कर्मचारियों के किए जा रहे शोषण के साथ–साथ यह कहानी आरक्षण जैसी व्यवस्था की विसंगतियों को भी प्रकट करती है। कथानायक पद्‌मकांत इस व्यवस्था से थक–हार कर अंत में शहर छोड़कर अपने गांव वापस लौट आते हैं और अपना पैतृक कार्य अपना लेते हैं। इस 'घर वापसी' के माध्यम से यह कहानी युवा बेरोजगारों को एक समाधान उपलब्ध कराने का प्रयास भी करती है।

कुतिया, कोदैली, अतीत जो नहीं गुजरा, बदलते प्रेम का ठहरा हुआ अंत, खाली दीवारें, संन्यासी, ऐसी प्रीत न लागे, परछाई और तर्पण आदि संग्रह की अन्य कहानियां हैं। इस संग्रह की कुछ कहानियों का विषय बासी है किंतु उन्हें प्रस्तुत करने का ढंग इतना रोचक और प्रवाहपूर्ण है कि उन्हें पढ़ने में ऊब नहीं होती तथा आगे क्या होगा

यह जिज्ञासा सदैव बनी रहती है। कहानी पढ़ते समय मनःचक्षुओ के सामने चलचित्र सा चलता रहता है। चित्रात्मकता बहुत मोहक एवं प्रभावशाली है। लेखन में सूक्तिपरक शैली का बहुत सुंदर प्रयोग किया गया है। इससे कहानियां लालित्यपूर्ण होकर पाठक को स्वयं में बांधे रखती हैं। आधुनिक बोलचाल की भाषा का प्रयोग करने के प्रयास में कुछ कहानियों में अंग्रेजी शब्द अधिक आ गए हैं और कहीं–कहीं अनावश्यक प्रतीत होते हैं। पात्रों के अनुसार उनके संवादों में ऐसा प्रयोग तो समझा जा सकता है किंतु लेखक के स्वयं के कथन में अंग्रेजी शब्दों का आधिक्य हिंदी कहानी के लिए उचित नहीं है। कहानियों के शीर्षक बड़े न होते तथा उनमें दार्शनिकता कम होती तो और अच्छा होता। लेखक डॉ. श्री प्रकाश मिश्र की लेखन शैली ने कहानियों को जिद्दी बना दिया है। एक बार शुरू करने के बाद ये स्वयं को पढ़वाकर ही दम लेती हैं। स्वयं को पढ़वाती ये कहानियां लेखक से और अच्छी कहानियों की उम्मीद जगाती हैं।

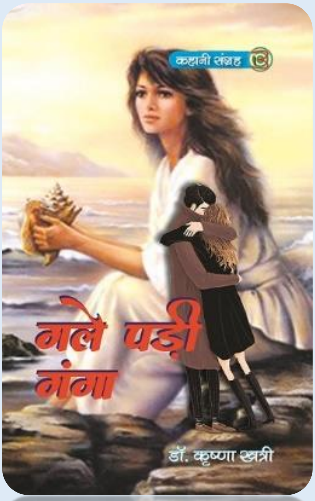

गले पड़ी गंगा

डॉ. कृष्णा खत्री

आईएसबीएन : 978-81-945460-7-8
संस्करण : 2020, मूल्य : 200/-

कृति–चर्चा

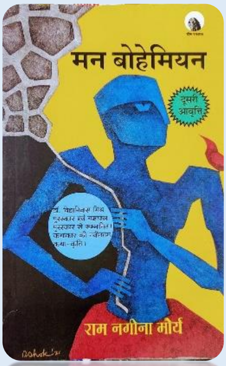

आत्मान्वेषण और आत्म-संघर्ष की कहानियां

मन बोहेमियन, रामनगीना मौर्य, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ, सं. 2021

डॉ. वेद प्रकाश अमिताभ
डी–131, रमेश विहार, अलीगढ़–202001
मो. 9837004113

अपने पांचवें कहानी–संग्रह 'मन बोहेमियन' की 'अपनी बात' शीर्षक भूमिका में रामनगीना मौर्य ने संकेत किया है कि उनकी कहानियॉ उन अनुभवों से बुनी गयी हैं, जिनमें जिजीविषा की झलक थी, खुद को जानने–बूझने, समझने का अवसर भी था। उनकी अधिकतर कहानियॉ घटना–प्रधान या चरित्र प्रधान न होकर प्रायः मनः स्थितियों के इर्द–गिर्द रची गयी हैं। यात्रा मन की है, लेकिन समय समाज की बाहरी कुरूपताओं और विडम्बनाओं से अप्रभावित नहीं हैं। कई

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

कहानियों में निर्जीव पदार्थो को भी 'चरित्र' बनाकर उनकी मानसिकता का बयान श्री मौर्य की प्रयोगधर्मिता का प्रमाण है। 'यात्रीगण कृपया ध्यान दें' संग्रह की 'रोटेशन सिस्टम से' कहानी में कुर्सियों की बातचीत दिलचस्प किन्तु अर्थपूर्ण है। अपने नये कहानी संग्रह 'मन बोहेमियन' की 'बोलते पत्थर' कहानी में भी कहानीकार ने इस फैंटेसी को आजमाया है। इस कहानी में बोलते पत्थर कई विसंगतियों पर अंगुली रखते हैं और गढ्ढों को पत्थरों से भरते बच्चे के माध्यम से नई पीढी के प्रति आश्वस्ति भी जगा जाते हैं, *''......हम पर तुम्हारी नजर पड़ी, यह नजरिया ही तुम्हें और बाकियों से अलग करता है। यही नजरिया तुम्हारे भविष्य की नई राहें खोलेंगी।''*

निर्जीव मेजें शीर्षक कहानी 'मन बोहेमियन' में भी हैं और बिना बोले कवि के रचनाक्रम में सहायता कर रही हैं। मच्छरों की बातचीत 'मच्छर महात्म्य' कहानी में है। यह कहानीकार का कौशल है कि मच्छरों का देश की प्रगति में योगदान एक कटु सत्य के रूप में आया है, *''....हमारे कारण मच्छरदानी बनाने, मच्छररोधी अगरबत्ती, मैट, क्रीम, लोशन आदि बनाने जैसे जाने कितने और भी सहयोगी उद्योग फल–फूल रहे हैं तथा किसिम–किसिम की योजनाएं भी पुष्पित–पल्लवित हो रही हैं।''* इसमें युवा पीढ़ी का सोच सकारात्मक संकेत की तरह है, *''....लीक पर चलकर कोई जीत या उपलब्धि नहीं हासिल हो सकती। इसलिए मैं कुछ 'हट के' लिखना–करना चाहता हूँ।''* शीर्षक कहानी ''मन बोहिमियन'' में कुछ बिखराव सा है। यह चरित्र विशेष के आत्मसंस्मरणों का संग्रह बनकर रह गयी है। इसमें कहानीपन कम, रिपोर्ताज की मुद्राएं अधिक हैं। 'शगुन', 'मदद', 'गोद', 'गार्जियन', 'घडी' निश्चय रूप से बेहतर कहानियां हैं। यह किसी न किसी संदेश की व्यंजना को समाहित किए हुए हैं। 'शगुन' में, '..धरा पर अंधेरा कहीं रह न जाये' का सन्देश मध्यवर्गीय कशमकश से निथरा है और 'गोद' की अनुभूति है, *''....यही तो प्यार है, जिसे समझा नहीं, सिर्फ महसूस किया जा सकता है।''* 'गणपूर्ति का खेल' में कथा–प्रवाह नहीं है, लेकिन एक विचार ने इसे महत्वपूर्ण बना दिया है, *''....जो मजा मैदान में बने रहने में है, वह भला मैदान छोड़कर जाने में कहाँ ?''*

'घड़ी' में पारस्परिक आत्मीयता बनाए रखने की समझ है और 'मदद' में दुखदग्धों की सहायता की जरूरत मुखर है। युवती की निर्णयशीलता ''गार्जियन'' कहानी में दीप्त है। मि. कपूर की अनैतिकता को झटकते हुए अनन्या तनिक भी द्वन्द्वग्रस्त नहीं है। कहानीकार उसके निश्चय–निर्णय के प्रति आश्वस्त है, *''....आसमान में तारों की हल्की टिमटिमाहट बता रही थी कि आसमान में बादल तेजी से छँट रहें हैं।''* 'शिकार' कहानी तो शीर्षक कहानी का ही एक्सटेंशन लगती है और 'पचपन कहानियां' कहानी के लिए वॉछित कौतूहल और संवेदनात्मक छुवन से दूर जा पड़ी है। रामनगीना मौर्य ने मनः स्थितियों का विश्लेषण करती कहानियों का अपना निजी स्वरूप निर्धारित कर लिया है और इससे एक अलग तरह के कहानीकार के रूप में उनकी पहचान बनी है।

मुकम्मल मिलन

डिंपल राठौर
dimplerathore1177@gmail.com

मिलना
मुकम्मल भी
कैसे होता हमारा
मैं टटोलती रही
तुम्हारा मन!

तुम
देह की देहरी से
लौटते रहे
हर बार...!

कृति–चर्चा

भावुकता के साथ मनोवैज्ञानिक चिंतन

केसरिया बालम (उपन्यास), डॉ. हंसा दीप, किताबगंज प्रकाशन, गंगापुर सिटी

विजय कुमार तिवारी
भुवनेश्वर, उड़ीसा, मो. 9102939190

प्रवासी भारतीय डॉ. हंसा दीप आज किसी परिचय की मोहताज नहीं हैं। खूब लिख रही हैं, खूब छप रही हैं और खूब चर्चा में हैं। अब तक उनके चार कहानी संग्रह और तीन उपन्यास छप चुके हैं। उनकी रचनाओं की पृष्ठभूमि बहुत व्यापक है। अपना देश तो है ही, विदेशी भूमि की खुशबू भी बहुत सहजता से परोस देती हैं। उनके पात्र चाहे कहीं के हों,बड़े जीवन्त और मानवीय भावनाओं से भरे हुए हैं। विशेष बात यह भी है, लम्बे अरसे से विदेश में रहने के बावजूद उनका मन, भारत में उनके उस परिवेश को भूला नहीं है जिसमें उनका बचपन बीता है, थोड़ी बड़ी हुई हैं या शुरुआत के संघर्ष के दिन, उनकी स्मृतियों में सारा कुछ अटा पड़ा है। जब चाहें,किसी तहखाने से जरूरत की घटनायें,यादें निकाल लाती हैं। विगत को वर्तमान में लाकर जीना या अनुभव करना, उनकी रचनाओं में देखा जा सकता है।

'केसरिया बालम' उपन्यास में उन्हें सहजता से खोजा जा सकता है। दरअसल रचनाकार अपने सृजन में होता ही है और सारे कथ्य–कथानक उसकी चेतना को प्राणवान बनाते हैं। किसी भी लेखक या साहित्यकार का यह स्वाभाविक सुख और आनन्द है। कहानी अपने देश की राजस्थानी मिट्टी से शुरु होती है और दूर पाश्चात्य देश–देशान्तर तक जाती है। उनका अपने उपन्यास का समर्पण देखिए,लिखती हैं, 'जीवन में, किताबों में, कलाकृतियों में, प्रेम के ढाई अक्षर को उकेरते उन तमाम प्रेमियों को समर्पित।' यह कोई साधारण समर्पण नहीं है, प्रेम से भरे एक प्याले का तमाम प्रेमियों तक पहुँचना है। यह उदारता भी है, सहभागिता भी और समर्पण तो है ही।

उपन्यास की पृष्ठभूमि को समझने के लिए हंसा दीप की 'अपनी बात' के इस खण्ड को उद्धृत करना उचित ही होगा– 'आज भी *केसरिया बालम पधारो म्हारे देश* लोकगीत की पंक्तियाँ अनायास ही गूँजती रहती है मन में। इन शब्दों के साथ हर उस लड़की की कल्पनाएं हिलोरें लेती हैं,जो किशोरावस्था से यौवन की देहरी पर कदम रखती है। अपने प्रियतम की प्रतीक्षा में रत ये अल्हड़ नवयौवनाएं इस गीत को गुनगुनाते हुए कई–कई बार मन के मीत से प्यार भरा आह्वान करती हैं।' यह सहज स्वीकारोक्ति संकेत देती है कि उपन्यास में प्रेम भरा पड़ा है,साथ ही उसमें विरोध–अवरोध और संघर्ष होंगे ही क्योंकि हमारा सामान्य जनमानस सहजता से ऐसी भावनाओं को स्वीकार नहीं कर पाता। जैसा कि उनकी रचनाओं में मन को समझने की बड़ी कोशिश रहती है, इस उपन्यास की संघर्ष गाथा में भी मनोवैज्ञानिक–चिन्तन माध्यम बना है स्थितियों की जटिलता का चित्रण करने में। जीवन के मनोविज्ञान को समझे बिना ना तो अच्छे से जीया जा सकता है और ना ही सम्बन्ध निभाये जा सकते हैं। जिसने जीवन के मनोविज्ञान को समझ लिया,उसके जीवन में सहजता आ ही जाती है। हंसा के लेखन का यह बहुत ही मजबूत पक्ष है।

अपने उपन्यास की कहानी का सारांश बड़े ही मार्मिक तरीके से उन्होंने स्वयं लिखा है– 'कहानी के पात्रों की जीवन यात्रा मेरे साथ–साथ चली है। केसरिया बालम का चहकता प्रेमी युगल शनैः शनैः मौन होता चला जाता है। नायिका धानी, शिद्दत से परिवार को

टूटने से बचाने की कोशिश करती है, जब तक संभव हो पाता है। नियति के हाथों परिवार टूट जाता है। समय के चक्र के साथ वह टूटी–बिखरी किरचियों को फिर से समेटने की कोशिश करती है। तब प्रेम की अनंत गहराई, मन से मन को छूकर संपूर्णता पाती है।' हंसा जी एक बात और लिखती हैं– 'कहानी, कहानी ही नहीं होती, समाज का आईना होती है। उसी आईने से नजर आते यथार्थ को शब्द भर दिए हैं मैंने। सच्चाई और कल्पना के बीच हल्की–सी लकीर भर खींची है। लिखते हुए कोरोना काल की भयावहता ने जन जीवन को प्रभावित किया। मेरे पात्र भी उसकी गिरफ्त में आए। कोरोना से जीवन बचाने के संघर्षों की जद्दोजहद ने कहानी को एक रचनात्मक अंत की ओर मोड़ा।'

'केसरिया बालम' को डॉ. हंसा दीप ने कुल 21 खण्डों में पूरा किया है और शुरुआत राजस्थान की मिट्टी की खुशबू से हुई है– 'केसरिया बालम पधारो म्हारे देश' बचपन से ही गाते हुए, अंदर ही अंदर, गहरे तक यह गीत रच–बस गया था। इसके तार दिल से जुड़े थे, मीठा लगता था, कानों में शहद घोलता हुआ। उस मिठास से सराबोर मन हिलोरें लेता रहता, सावन के झूलों जैसी ऊँची–ऊँची पींगें लेकर। इस छोर से उस छोर तक।'

कहानी शुरू होती है, राजस्थानी भाषा में मां–पिता की बातचीत से। उसमें बेटी के सुखद भविष्य का आश्वासन है, खुशी है, जोश, उत्साह है और धानी कहीं खो जाती है। सहेलियों की बातें मस्ती भर देतीं– 'कुँवारे मन की उड़ान की कोई हद न थी, कोई सरहद रोक नहीं पाती, बस उड़ते ही जाते वहाँ तक, जहाँ तक मन करता, दिन के हर पल, हर क्षण।' वही धानी विदेशी धरती पर मशीनी दुनिया में मशीन हो गयी है। मोहभंग हो गया है। सारा चित्रण यथार्थ है। सपने बिखर गये हैं, मां सा के सपने, बाबा सा के सपने और खुद धानी के भी। सुखद कल्पनाओं से भरा अद्भुत लेखन है हंसा जी का। चरित्र भले धानी का है, उड़ान और कल्पना की अनुभूतियाँ रचनाकार की हैं। हंसा की विशेषता है, हर उम्र के नारी मन को खूब समझती हैं और पूरी बेबाकी से चित्रण करती हैं, सच्चाई बयान करती हैं। सलोनी, धानी और कजरी तीनों के माध्यम से हंसा जी ने जो

चित्र खींचा है, जो उड़ान है और अंत में जो सच है, शायद ही कोई पाठक होगा जो डूब न जायेगा।

पंखों को छूती हवाएँ, उपन्यास के तीसरे खण्ड में भी सखियों की बातें जारी है और लेखिका के भीतर का बतरस रिक्त नहीं हुआ है। सलोनी की शादी हो गयी है और वह चली गयी अपने पतिदेव के साथ। अब धानी की बारी है और उसके जीवन में कल्पनाएं ही कल्पनाएं हैं,सुखद और रंग–बिरंगी। हंसा जी लिखती हैं– 'कुँवारी कल्पनाएं कितनी मासूम थीं।' बाबा सा धानी को समझाते,साहस देते और नाना तरह से जीवन जीने के मंत्र समझाते। धानी ध्यान से सुन लेती और खुश होती। वही बच्ची अब बाबा सा को फोन, ह्वाट्सएप आदि के बारे में समझाती है। मां सा और बाबा सा के बीच धानी हँसती, खिलखिलाती, सारे उत्सव मनाती और मधुर कल्पनाओं में खोयी रहती। बाबा सा समझाते, 'किसी के जीवन में रोशनी लाने की कोशिश करना बेटा!' मां सा कहतीं, 'बेटियाँ भी तो वैसी ही होवे हैं मिट्टी जैसी,पराये घर में जाकर वैसे ही ढल जावे हैं। दीयों सी जगमगावे,जहाँ जावे हैं,उजालो फैला देवे।' बाबा सा को चिन्ता होती है कि कैसे रहेगी धानी उनके बगैर ? उधर धानी की मनोदशा कुछ और ही है, सोचती है, 'जीवन की सबसे अच्छी बातें जो मौन थीं, खामोश थीं। अनगिनत शब्द जो एक लंबी किताब की तरह छप चुके थे धानी के मन में। और बस उस किताब को पढ़ते रहना चाहती थी धानी।' रोएं खड़े हो जाते हैं, उसके प्रेम के भाव से, धानी सोचती है, 'क्या प्रेम इतना सिहरन भरा होता है।' वह महसूस करती है, 'प्रेम का यह भाव जब दूरियों में है तो मिलने पर क्या होगा ?'

चौथे खण्ड, इन्द्रधनुषी रंग में शादी के रीति–रिवाजों के साथ गीत–संगीत की धूम है। हंसा जी का मामा के लिए, दो बार मां की आवृति वाला विचार बड़ा उपयुक्त लगा। लोकगीतों से सजा राजस्थानी वैवाहिक कार्यक्रम सम्पन्न हुआ और भारी मन से धानी की विदाई हो गयी। हंसा जी ने भाषा का ध्यान रखते हुए स्थानीय बोली और शब्दों का खुलकर प्रयोग किया है,इससे कहानी में रोचकता बढ़ गयी है। धानी का प्रेम और बाली से रिश्ता जन्म–जन्म का है। ऐसी अनुभूति उसे अनायास हँसा देती है। वाकई प्यार अंधा होता है। एक सप्ताह

बाद बाली अमेरिका चला गया। हंसा जी लिखती हैं, 'मिलन और फिर बिछोह ने प्रेम की पराकाष्ठा को छू लिया।' नदी और समुद्र की चर्चा करके आगे कहती हैं, 'यह प्रेम है जो अपनी हर लहर के साथ पुनर्नवा हो उठता है।' अंततः धानी अपने बालम बाली के साथ सारे रिश्तों को अच्छे भाव से निभाने का ख्याल लिए निकल पड़ी।

पाँचवाँ खण्ड का शीर्षक है—पुनरारोपण। लेखिका का स्वयं का विदेश जाने का अनुभव है, इसलिए सारा वर्णन स्वाभाविक तौर पर सत्य और रोचक बन पड़ा है। धानी, बाली के परिहास पर उत्तर देती, 'मैं जन्मों तक प्रतीक्षा कर सकती हूँ, सुबह—शाम तो कुछ नहीं।' वह कहता, 'पागल लड़की, सचमुच पागल।' तीनों सहेलियों का अहसास भिन्न है। हंसाजी लिखती हैं, 'सही भी तो था, प्रेम का अहसास राजा—रंक, ऋषि—मुनि, स्त्री—पुरुष या फिर यूँ कहें कि हर प्राणी के लिए अलग होता है। तभी तो इस शब्द की असंख्य अनुभूतियाँ हैं।' धानी को अपने लिए काम की तलाश है, 'खोजती रहती अपनी उड़ान के लिए ऐसे पंख जो उड़ने की खुशी भी दे और आकाश में अपनी जगह भी बनाये।' वह प्रेम की गहराई को समझना चाहती है, 'धानी को लगने लगा कि महसूस करने भर के लिए यह देह उसकी है पर उसमें खुशी, नाराजगी, दर्द, अहसास और इतने सारे खानाबदोश भाव जो आते—जाते रहते हैं, शायद बाली भरता है। बाली ने उसके मन और देह पर इतना अधिकार कैसे पा लिया?' उसका पसंदीदा उत्सव आने वाला है, बाली ना कर देता है। धानी सोकर उठी, देखती है— बाली की शरारतों का अंबार लगा था उसके शरीर पर चारों ओर। अंग—अंग पर इस तरह रंग लगाया था बाली ने कि शरमाकर लाल हो गयी। हंसा जी लिखती हैं, 'एक—दूसरे की चिन्ता करते, एक—दूसरे की सोच का आदर करते, एक—दूसरे का ध्यान रखते, एक—दूसरे से बेतहाशा प्यार करते,प्यार के पंछी।'

उपन्यास लेखन का हंसा दीप जी का अपना प्रवाह है। जिस भाव—विचार में उनका मन रमता है, उसका विशद विवरण देकर पाठकों को तृप्त कर देती हैं। यह उनकी विशेषता भी है और शायद कमजोरी भी, कुछ लोग मान लें। छठा खण्ड, एक नया कदम, धानी के जीवन में बेकरी सॉप, नया कदम ही है। बेकरी के लोगों की

बातचीत, अर्थतंत्र, मजबूरी और जीवन का फलसफा, बहुत सुन्दर वर्णन की हैं, लिखती हैं, 'जब पैसा अपनी धरती से दूर ले जाता है तब मन उसके और करीब हो जाता है। कहते हैं कि दूरियाँ यादों को बढ़ाती हैं तथा यादें और ज्यादा नजदीक ले आती हैं।' धानी मेहनती है, व्यवहारिक है, नित्य नया प्रयोग करती है, उसकी साख बढ़ रही है और मालिक उसे पदोन्नति देकर मैनेजर बनाना चाहता है। बेकरी का प्रचार और विस्तार हो रहा है।

आसमानी ख्वाब जमीन पर, सातवाँ खण्ड है। व्यावसायिक गुण कहीं न कहीं होता ही है लोगों में। हंसा जी ने उसी का सदुपयोग किया है और बेकरी सॉप को खूब चमकाया है। साहित्य ज्ञान के साथ, व्यवसाय और मानवीय अनुभूतियों की समझ ने कहानी को खूबसूरत विस्तार दिया है। तनख्वाह बढ़ा दिया है मालिक ने, बोनस भी देता है और धानी को बेटी की तरह मानता है। सम्बन्धों की मधुरता और विस्तार का पाठ हर व्यक्ति को हंसा जी की लेखनी से सीखना चाहिए। धानी के चिन्तन का दायरा विस्तृत हो उठता जब वह सोचती है, 'कितनी खुशी होगी उस घर में, जहाँ यह केक कटेगा। उसका पुरस्कार भी धानी को मिलता जब कोई बच्चा पिता के साथ अपना केक लेने आता और खुश होकर कहता, 'आप दुनिया की सबसे अच्छी केक बनाने वाली लड़की हो।' हंसा जी इस दृश्य का जीवन्त चित्रण करती हैं, 'वह एक प्यारा–सा चुंबन देतीं उसे हवा में और तब, देर तक उस बच्चे की खुशी धानी को प्यारी–सी मुस्कान में डुबो देती।'

आठवाँ खण्ड गर्माहट पर पानी के छींटे में स्वाभाविकता है। पैसा आता है तो बहुत सारी व्यस्तताएं, निश्चिन्तता ले आता है और आपसी सम्बन्धों को प्रभावित करता है। दुनिया में पैसे की कमी वाले लोग जितना दुखी नहीं है, उससे अधिक दुखी पैसे वाले हैं। पैसे की कमी वाले लोगों का दुख कुछ पैसा आ जाने से दूर हो जाता है परन्तु पैसे वालों का दुख लगभग स्थायी होता है और जीवन भर घर की अशान्ति का कारण बना रहता है। धानी समझने लगी है, 'प्यार की तीव्रता अब वैसी नहीं रही। रिश्तों की गर्माहट का गुनगुना अहसास भी कम हो गया था। कही कुछ तो ऐसा था जो धीरे–धीरे घटता जा

रहा था।' उसे दिखने और लगने लगा कि पहले जैसा कुछ भी नहीं है। वह सोचने लगी, 'जमीन पर रहना कितना सुखद है, यह शायद आसमान में रहने वाला ही समझ सकता है।' धानी के सामने प्रश्न था, 'न कोई वाद–विवाद, न कोई प्रतिवाद, न गरीबी, न अशिक्षा, न नफरत, न द्वेष... इन सबके बगैर भी अगर रिश्ते में खिंचाव आने लगे तो उसे क्या कहा जाय ?'

फूटती कोंपल नौवाँ खण्ड है। धानी मां बनने वाली है। जब बाली को यह खबर मिली तो उछल पड़ा वह। बहुत खुश हुआ। उसने पिता की सारी जिम्मेदारियाँ उठा ली। धानी खुश होती और सशंकित भी, 'आदमी से आदमी निकलना कोई हँसी खेल तो नहीं।' धानी आशान्वित रहती कि यह नया परिवर्तन, नया जीवन देगा। आर्या का जन्म हुआ। हंसा जी लिखती हैं, 'उसकी चाह होने लगी कि बाली उसके समीप आये। उसकी देह कैनवस हो जाए और बाली उसके पोर–पोर में रंग भरता रहे। वह खुद को इन्द्रधनुष बनते देखना चाहती थी।' आगे लिखती है, 'प्रेम जब भौतिक होने लगता है, आकार लेने लगता है तो कई रंगों से मिलकर बनी रँगीली छँटाए मुग्ध कर देती हैं।' हंसा जी का अद्भुत चिन्तन पढ़िए, 'बड़ी होती बेटी अपने पिता के हृदय में एक पौधे सी उगने लगती है। जब बाली आर्या के साथ खेल रहा होता तो धानी को लगता प्रेम किस तरह रुप बदलता है। कभी बाली बादल बन धानी की धरती पर बरसता था, अब धानी ने उस मेह को वाष्प में बदल कर फिर से बाली के आकाश में भर दिया है। प्रेम ऐसा होता है कि पिघलता है तो बरसता है। उष्णता पाता है तो घनीभूत होता है ताकि फिर बरस सके। यही तो चाहती है प्रकृति कि उसका बादल कभी शुष्क और खाली न हो।' हंसा जी की भावनात्मक, कोमल उड़ान सबको रोमांचित करती है और प्रेम–मिलन की आतुरता बढ़ा देती है।

दसवाँ खण्ड यानी रुख बदलती हवाएं, ऐसा बदलाव लेकर आया जहाँ बहुत सी चीजें प्रभावित करने लगीं। मां सा कहा करती थीं, 'मौसम सदा एक सा नहीं रहता।' धानी ने मित्रों से पता करना चाहा। ज्ञात हुआ कि बाली बड़े आर्थिक संकटों में उलझा हुआ है। धानी को कुछ नहीं बताया। उसने सोचा, 'आखिर इतने अपनेपन के

बीच इतना परायापन लाया कहाँ से?' उधर पिता की हालत अच्छी नहीं है। धानी हार मान लेने वालों में नहीं है। उसने सीखा है, 'आशा की डोर थामे रहना ही आगे का रास्ता बना देता है।' झटके में ही धानी के माता–पिता चल बसे। ग्यारहवाँ खण्ड अपने नीड़ में धानी लौट आयी अपने देश से। यहाँ बाली का मन बदला नहीं बल्कि और कठोर हो गया था क्योंकि धानी ने अपने बाबा सा की सारी सम्पत्ति दान कर दी। बेकरी की स्थिति पूर्ववत थी। आर्या के लिए पिता के रुप में बाली ने सारी जिम्मेदारी सम्भाल ली थी। उसे लगा, बाली और उसके बीच प्यार का एक अटूट सेतु है आर्या। आर्या ही है जो दूर होते दो छोरों को कसकर पकड़े हुए है। बारहवाँ खण्ड, चुप्पियों का बढ़ता शोर, धानी के जीवन में पसरा हुआ था। हंसा जी लिखती हैं, 'पुरुष हताशाओं के घेरे में जकड़ने लगे तो उसका पौरुष चोट खाये हुए घायल शेर की तरह हो जाता है जो अपने क्रोध की अग्नि में खुद तो खत्म होता ही है,दूसरों को भी नहीं छोड़ता।' धानी कहती, 'मुझे चोट पहुँचा रहे हो बाली।' बाली ने वही तरीका अपना लिया था और नित्य चोटिल करता। धानी संतोष करती, 'इसी बहाने बाली मेरे पास आता तो है। अगर इस शरीर से बाली को सुख मिलता है, तो ठीक है। थोड़ा–सा कष्ट ही सही।' चोट खाया अहं और घायल पौरुष रिश्तों को लगातार खत्म कर रहा था। धानी सोचती, 'मन की दुविधा को तो हटाया जा सकता था पर जब किसी के मन में भूसा भरा हो तो उसे क्या कहा जाये?'

अमावसी अंधेरों में, उपन्यास का तेरहवाँ खण्ड शायद दुखद अनुभूतियों को और घना करने वाला है। अब बाली देर रात तक नहीं आता या बाहर सोफे पर सो जाता या अपनी हवस मिटाकर सो जाता। दोनों के भीतर प्रेम भाव जगाने वाली क्रियाएं अब हवस हो गयी हैं। मन बदलता है तो जीवन के सार्थक शब्द भी अर्थ बदलने लगते हैं। धानी ठान लेती है, अब जानकर ही रहेगी, आखिर बात क्या है ? उसके मन में एकाएक विचार आया, कहीं बाली के जीवन में कोई और लड़की तो नहीं आ गयी है ? वह तैयार थी, अपने प्यार के लिए सब कुछ कर सकती है। प्रश्नों का उत्तर नहीं देता, न कोई जवाब, न दिलासा, न बचाव, बस प्रश्नों को अनुत्तरित छोड़ देना।

बाली स्वयं को फालतू मान बैठा था जो पत्नी की कमाई पर जी रहा है। पुरुष का अहं स्त्री से सलाह मशविरा करने में कतराता रहा। बाली को लगता था कि एक सफल पत्नी, एक असफल पति को कभी भी धोखा दे सकती है। ऐसे निराशा के दौर में भी हंसा जी की लेखनी उन स्नेहिल क्षणों की चर्चा कर ही देती हैं कुछ पुरानी स्मृतियो के बहाने, मानो उनका स्थायी भाव हो, लिखती है– 'बाली कुछ बोले, उससे पहले ही वह उसका मुँह बंद कर देती अपने होंठों से। तब वह कुछ न बोल पाता। खो जाता उन होंठों की गुनगुनी छुअन में जो अंग–अंग में फैल जाती, एक खुशबू की तरह।' बाली अपनी नाकामियों का ठीकरा धानी के सिर खुलेआम नहीं फोड़ता पर रात के अंधेरे उसे असभ्य बना देते। इतने असभ्य कि वह अपनी हर नाकामयाबी का गुस्सा उसी पर निकालता जिसे उसने बेहद चाहा था।

चौदहवाँ खण्ड, अहं से आह तक में अँधेरा और गहरा हो गया है। हंसा जी लिखती हैं, 'हारी हुई मनोग्रंथि की जकड़न में छटपटाता अपनी दमित इच्छाओं को बाहर निकालता। पुरुष का दंभ उसमें यह उन्माद पैदा करता कि वह सब कुछ कर सकता है। वही उन्मादी आवेग रात के अंधेरे में जब धानी पर धावा बोलता तो वह ऐसी हो जाती जैसे किसी ने एक ही बार में उसे निचोड़ कर रख दिया हो। हमले के बाद जैसे किसी हारे हुए सेनापति की दुर्गति होती होगी, वैसे ही वह महसूस करती। उस जंग में हार झेलते, उसकी देह लकड़ी–सी होती जा रही थी। बाली और धानी उसी जीवन को जीते रहे। हंसा जी के लेखन में परत–दर–परत खुलते मनोवैज्ञानिक विवरण जीवन की सच्चाई सामने ला रहे हैं। ऐसी परिस्थिति का अनुभूत जैसा सजीव चित्रण अद्भुत है। ऐसा बहुत कम देखा जाता है। कुछ लोग नकारात्मक भाव–सम्प्रेषण कहकर या अत्यधिक रूमानियत वर्णन कहकर दोष लगा सकते हैं। मुझे लगता है किसी भी लेखिका के लिए यह साहस करने जैसा है। शायद उद्देश्य यही रहा होगा कि पाठक उन परिस्थितियों को यथार्थतः समझें और बाली–धानी के जीवन के अन्तर्द्धन्द पर विचार कर सकें। यह कहानी उन हजारों लाखों दम्पतियों के जीवन को राह दिखा सकती है जो ऐसी परिस्थितियों में उलझे पड़े हैं। विचित्र मनोग्रंथी विकसित हो गयी

है बाली की। यह हमारे समाज की परिभाषाओं का दोष है। क्यों पुरुष का अहं आड़े आ जाता है ? हंसा जी लिखती हैं, 'धानी की उन्नति के आगे अपना हुनर दिखाने की होड़ ऐसी लगी कि धानी का काम नहीं उसके व्यक्तित्व से भी जलन होती। दिखती सुन्दर है, लगती सुन्दर है। दिल जीतने में माहिर है। वह कहीं उससे पीछे रह गया है, बहुत पीछे।' उसे बेकरी के मालिक, ग्रेग, लीटो सबके साथ धानी दिखाई देती, बस उसके खुद के साथ न दिखती। अपने साथ तो अब बिल्कुल भी नहीं दिखाई देती। स्थिति यह हुई कि उस कार को भी बेचना पड़ा जिससे उन दोनों की बहुत सी यादें जुड़ी हुई थीं।

अक्सर हम घर सजाते हैं। नयी–नयी तस्वीरें, पेंटिंग लाते हैं, सुखी और आनंदित होते हैं। धानी के घर में भी महंगी तस्वीर है, बड़ी ही अर्थवान, सुन्दर और खुश करने वाली, परन्तु अब उसका मन करता है कि उसे तोड़ डाले। जब मन हरा–भरा था तब सब अच्छा लगता था। बदलती नजरें, बदलता नजरिया, इस पन्द्रहवें खण्ड की मूल भावना है। उपन्यास की यात्रा को इन थीम आधारित शीर्षकों ने अत्यन्त रोचक बना दिया है। गद्य शैली में लिखा कोई काव्य लगता है। सम्पूर्ण कहानी लगता है जैसे धानी सुना रही है। पाठकों को यह रोमांचित करता है और निश्चित ही सहानुभूति जागती है। लेखन की अपनी विशेषता ही है कि लाख उलाहनाओं, समस्याओं के बावजूद बाली के प्रति कोई आक्रोश नहीं पैदा होता। स्वयं धानी भी इन्हीं भावनाओं के साथ अच्छे दिनों के लौटने की उम्मीद लगाये हुए है। धानी कभी अधंविश्वासी नहीं रही है परन्तु उसके वजूद में उसका प्रवेश होने लगा है। सोहम जैसे मित्र धानी को सुखी करने की नाकाम कोशिश करते, परन्तु यह तो दो लोगों के आपसी रिश्तों का ऐसा शीतयुद्ध था जिसमें न किसी की हार होती दिखती थी, न जीत, परन्तु युद्ध विराम भी नहीं दिखता था।

हंसा दीप स्वाभाविक सी कुछ घटनाएं, पात्र उजागर करके जोड़ती हैं। सोहम कुछ वैसा ही पात्र है जो धानी को पसंद करता है और उसका दुख दूर करना चाहता है। उसे बाली पर गुस्सा आता है। सोहम जानता है कि इससे धानी का जीवन लांछित हो जायेगा। वह अपने मन की भावनाओं को दबाकर धानी से दूर हो जाता है।

ऐसा होता ही है जीवन में। ऐसे लोग मिलते हैं, वे अच्छे होते हैं। उनके उद्देश्य अच्छे होते हैं परन्तु घटनाएं घटित हुए बिना अपना मार्ग बदल लेती हैं। सोहम धानी से बनाना चाहा रिश्ता पर बन न सका। यह हंसा जी के लेखन पर पाश्चात्य प्रभाव है वरना यहाँ के जनमानस में ऐसी बातों का उल्लेख नहीं होता।

सोलहवाँ खण्ड, बारूद के ढेर पर है। घर के, जीवन के हालात बहुत बुरे होते जा रहे हैं। कुछ भी ठीक नहीं हो रहा है। पुत्री आर्या बेखबर है और बड़ी हो रही है। आर्या की बातें, उसका हँसना, खिलखिलाना धानी को बचपन की स्मृतियों में ले जाती है। शादी के समय की दहलीज लाँघ कर निकलने का रिवाज इसी लिए तो नहीं बना है कि लड़की फिर वापस आये ही नहीं। हंसा जी बहुत गहरे भाव से पूछती हैं, 'क्या यही कारण है कि लड़की हर जगह सहती रहती है, क्योंकि जिस घर में पली–बढ़ी, उस घर के दरवाजे देहरी पूजा के बाद तो बंद ही हो जाते हैं।' धानी उतनी विवश भी नहीं है। वह तो अपने रिश्ते संभालने का हर संभव प्रयास कर रही है ताकि कभी भी उसे यह न लगे कि उसने पूरी कोशिश नहीं की। बड़ी महत्वपूर्ण बात धानी सोचती है– वैसे भी अपनों से हारना भला कोई हारना होता है। अपनों से हार भी जीतने की खुशी देती है। बाली को इस बात से भी शिकायत होती कि धानी उससे दूर क्यों रहती है ? जो व्यक्ति अपनी गति, लय ताल भूल चुका होता है, ऐसा ही सोचता है। न स्वयं को समझता है और न दूसरे को। धानी को पता है, बाली कुंठित होता जा रहा है। धानी बेकरी की इजी से अपना दुख बाटती है। इजी उसे हौसला देती है। कहती है,लाख अच्छाइयाँ होने पर भी सब कुछ अच्छा ही अच्छा नहीं होता। किसी दिन उसने सोच लिया, आज बाली से कहेगी, 'असफल तुम हुए हो, इसमें मेरा क्या दोष है। गलतियाँ तुम करते हो और शरीर मेरा नोचते हो।' उसे लगा बारूद का ढेर बढ़ता जा रहा है। हो जाने दो जो होना है। उस रात बाली आया ही नहीं।

'केसरिया बालम' का सत्रहवाँ खण्ड, एक किनारे की नदी, कुछ और ही दिशा का संकेत करने लगी। बाली किसी से फोन पर झगड़ा कर रहा था। धानी आशंकित ही नहीं भयभीत भी हुई। आर्या

को भी अपने पापा के लिए और अपने पापा से डर लगा। वह अपने घर की चुप्पी को अब पहचानने लगी थी। आर्या समझने लगी थी कि ममा–पापा के बीच सब कुछ ठीक नहीं है। रिश्तों का ठंडापन घर शब्द का अर्थ बदल देता है। धानी भी तनहा जीना सीख रही थी। उसकी दुनिया में आर्या,घर और बेकरी थी। आर्या अब समझदार हो चुकी है और सब कुछ समझ रही है। उसने अचानक अपनी मां के चोट के निशान को देखा, बौखला गयी। उसने जो रुप धारण किया,ममा को कौंसलर के पास ले गयी। बाली को बचाना मुश्किल था। शायद धानी स्वयं ऐसा नहीं करती परन्तु परिस्थिति ने करवा दिया।

अठारहवाँ खण्ड, केसरिया से केस, अद्‌भुत स्थिति थी। कानून का खेल शुरु हो गया। आर्या का अपने पिता के लिए सम्बोधन बदल गया था। केस भी अजीब था, आरोपी के खिलाफ कोई आरोप नहीं था सिवाय इसके कि आवेग और उन्माद में सब कुछ हो जाता था, यह हिंसा नहीं थी। दुखद यह था कि आर्या के सामने सारी गोपनीय बातें उजागर करनी पड़ती थी। धानी कभी नहीं चाहती थी इन सब बातों की चर्चा हो परन्तु एक सच यह भी था जब प्यार गुनाह में बदलने लगे तो सजा तो मिलनी चाहिए। वह बाली को दुखी देख दुखी होती थी परन्तु उन स्याह अँधेरे उसके कृत्यों को याद करके परेशान हो उठती थी। आर्या खूब बहस करती, कहती, 'जुर्म करना ही अपराध नहीं है, जुर्म सहना भी अपराध है।' आर्या उससे प्रश्न करती, कायर कहती। धानी ने कहा, 'बेटा मैं कमजोर नहीं हूँ, कायर भी नहीं हूँ। इसलिए नहीं सहती थी कि मैं विवश थी या कुछ कर नहीं सकती। मैं तो सिर्फ और सिर्फ इसलिए चुप थी कि मैं तुम्हारे पापा से बहुत प्यार करती हूँ। बस, उनके बदलने का इंतजार था, बस इसीलिए।' अंततः बाली को जेल हुई। धानी ने महसूस किया कि सजा तो उसे भी मिली है। अब अपना ही घर बेचैन करने लगा। वह बेडरूम में नहीं जाती, बहुत सी यादें जुड़ी थीं।

उन्नीसवाँ खण्ड, बदली देहरी बदले पैर, अब हालात और बदल गये हैं। बाली बालेन्दु प्रसाद के रूप में सुधार गृह में है। धानी और आर्या दोनों अपनी–अपनी स्मृतियों के आधार पर दुखी हुए। आर्या

ने ममा को जाकर देख आने को कहा और लौट आने पर उसने बहुत कुछ पूछना चाहा। बाली सब कुछ भूल चुका है और एक छोटे बच्चे की तरह हो गया है। धानी ने नौकरी छोड़ दी है और उसी सुधार गृह में बाली और वैसे अन्य लोगों के सुधार में लगी रहती है। बाली उसकी प्रतीक्षा करता है और उसके आने पर खुश होता है।

बीसवाँ खण्ड, और दौड़ती दुनिया थम गयी, पूरी दुनिया एकाएक रुक सी गयी। कोरोना ने तबाही मचा रखा है। आर्या घर आ गयी है। सबको बचकर रहना है। उस सुधार गृह में भी कोरोना फैल गया, जिसमें चार लोगों की मौत हो गयी। धानी को अनुमति मिल गयी है, वह बाली को घर ले जा सकती है। लाने के समाचार से आर्या न खुश न दुखी हुई। सारी तैयारियाँ पूरी हो गयी। उसने भी कुछ जिम्मेदारियाँ ले रखी थी। बचपन से आज तक उसने अपनी ममा में उसने एक नदी की चंचलता देखी तो सागर का गाम्भीर्य भी देखा। आर्या अपनी मां के बारे में सोचकर गर्व महसूस करती है।

उपन्यास का अंतिम इक्कीसवाँ खण्ड, केसरिया भात की खुशबू, सब कुछ सहेज लाया है। जीवन में खुशियाँ लौट आयी हैं, कम से कम ऐसे ही आसार हैं। आज बाली घर आने वाला है। सिर्फ अपनी देह के साथ। ऐसी चेतना विहीन देह जो देह होने का अर्थ भी नहीं जानती। ऐसी देह जहाँ न मन है, न दिमाग। न विचार है, न भावना। और ये सब जब न हों तो क्या हम उसे पागल कह दें ? वह और कुछ न हो, इंसान तो है। उसी इंसान के लिए घर तैयार हो रहा है। आर्या को पापा के लिए कभी प्यार था, फिर नफरत हुई और अब सहानुभूति है। बरसों बाद घर में केसरिया भात बन रहा था। वही खुशबू फैल गयी थी घर में, धानी के तन–मन में, जो बाली की पहली झलक में मिली थी। उधर आर्या खुश होकर ममा के गले लग गयी क्योंकि पापा के आ जाने के बाद आर्या का प्रेमी अवि प्रस्ताव देने वाला है। बाली सीखने लगा, बोलने लगा, समझने लगा और दोनों खुश होने लगे। वासना से दूर पारस्परिक नेह में बँधे दो इंसान।

'केसरिया बालम' दो देशों के बीच जीवन की उष्णता, प्रेम, संघर्ष, उत्थान, पतन और फिर सहेज लिए जाने की खुशियों की कहानी है। भाषा और शैली सारे परिदृश्यों को जीवन्त बनाते हैं। यह

उपन्यास नारी–विमर्श, नारी चेतना को सामने लाता है। कहीं–कहीं कुछ खाली–खाली सा लगता है या किसी एक ही भाव की बार–बार पुनरावृत्ति भी हुई है। सुखद है कि उसके बावजूद रोचकता बनी हुई है। सबके चिन्तन का मनोवैज्ञानिक पक्ष खूब उभरा है और प्रेम की टीस भी। हंसा जी को इसमें महारत हासिल है। लेखिका अनेक स्थलों पर कुछ अधिक ही भावुक होती दिखती हैं। भेद करना मुश्किल हो जाता है कि उनका अपना दुख और संघर्ष है या उस चरित्र का? महाकवि नागार्जुन अज–विलाप के प्रसंग में लिखते हैं– 'कालिदास सच–सच बतलाना, अज रोया या तुम रोये थे?' खुशी है कि उपन्यास अपना संदेश सफलता पूर्वक दे सका है और पाठकों को बाँधे रखने में सफल है। डॉ. हंसा जी का हिन्दी साहित्य में स्थान बन चुका है और वे लगातार अपने सतत लेखन द्वारा साहित्य में समृद्धि ला रही हैं।

पहले प्रेमी की दूसरी बरसी पर

डिंपल राठौर

सुना था कहीं कि
जहर ही जहर को काटता है
मैं बदलती रही प्रेमी
जाने क्या जहर था मेरे स्पर्श में
कि छूते ही हर प्रेमी पेड़–सा निपात हो ठूँठ हो जाता
मैं पहले स्पर्श को दूसरे को बताती रही
दूसरे का तीसरे को
पर पेड़ों का निपात होना ना रोक पाई
पीले जर्द पत्ते फड़फड़ाते रहे हवाओं में
ना लिखे गये प्रेमपत्र से
मेरे हर स्पर्श में तुम थे
तुम्हारी स्मृतियाँ थी
तब जान पाई कि पुराना प्रेम भी
ठहरा रहे तो
जहर हो जाता है
जहर....!

ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

हमारा घर जल रहा है

- ग्रेटा थनबर्ग
(भावानुवाद डॉ. प्रशान्त द्विवेदी
एसोसिएट प्रोफेसर
डॉ. भीमराव आंबेडकर राजकीय महिला
स्नातकोत्तर महाविद्यालय फतेहपुर)

(स्वीडिश क्लाइमेट एक्टिविस्ट किशोरी ग्रेटा थनबर्ग को एक वक्ता के रूप में उनके शानदार कौशल के लिए जाना जाता है। 2018 संयुक्त राष्ट्र जलवायु शिखर सम्मेलन में उनके अतुलनीय भाषण ने उन्हें घर-घर में पहचान दिलाई। हिन्दीभाषी पाठकों के लिए उक्त भाषण का हिन्दी अनुवाद डॉ. प्रशान्त द्विवेदी, एसोसिएट प्रोफेसर डॉ. भीमराव आंबेडकर राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय फतेहपुर द्वारा किया गया है। डॉ. प्रशान्त द्विवेदी उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत शिक्षक होने के साथ-साथ गैर सरकारी संगठनों के साथ भागीदारी कर समाज तथा पर्यावरण के लिए सामाजिक कार्यों में सहयोग करते रहे हैं। उक्त अनुवाद का उद्देश्य हिन्दीभाषी राज्यों की सरकारों, प्रशासकों एवं आम जनमानस को जलवायु परिवर्तन की भयावहता तथा जीवाश्म ईंधन के अंधाधुंध प्रयोग के दूरगामी दुष्प्रभावों के प्रति जागरूक करना है।)

मैं सोलह वर्षीय स्वीडिश लड़की हूँ और मेरा नाम ग्रेटा थनबर्ग है। मैं आज जब यहाँ बोलने खड़ी हुई हूँ तो सिर्फ़ अपने लिए नहीं, बल्कि आगे आने वाली पीढ़ियों का प्रतिनिधित्व करते हुए बोल रही हूँ। मैं जानती हूँ आप में से अधिकांश, बच्चों की बात को महत्व नहीं देंगे। किंतु जलवायु विज्ञान के संदेश को हम एकजुट होकर ही समझ सकते हैं, चाहे हम बच्चे हों या बड़े, इस देश के हों या किसी अन्य देश के। आपमें से अधिकांश लोग इस बात से परेशान दिख रहे हैं कि मैं आपका कीमती समय बर्बाद कर रही हूँ, किन्तु मैं आपको यह विश्वास दिलाना चाहती हूँ कि यदि आप मेरी बात ध्यान से सुनेंगे तो शायद जब हम अपने स्कूल वापस जायेंगे तो एक बेहतर भविष्य के साथ जायेंगे। क्या यह आकांक्षा बहुत अधिक है?

2030 तक मेरी उम्र 26 वर्ष हो जायेगी और मेरी छोटी बहन भी 23 वर्ष की होगी। आपके नाती-पोते भी शायद इतनी ही उम्र के होंगे। मुझे बताया गया है कि ये उम्र का एक बहुत महत्वपूर्ण पड़ाव है, क्योंकि आपके भविष्य का जीवन इसी पर निर्भर करता है। किन्तु मुझे संदेह है कि हमारे लिए उम्र का ये पड़ाव उतना अच्छा सिद्ध होगा। मैं अपने को भाग्यशाली समझती हूँ कि मैंने ऐसे समय और ऐसे स्थान पर जन्म लिया जहाँ मुझे सपने देखने और उनको पूर्ण करने की स्वतंत्रता थी। हमारे लिए हमारी आवश्यकता से अधिक था।

इतना जितना कि हमारे पूर्वज कल्पना भी नहीं कर सकते थे। किन्तु आज हम वहाँ खड़े हैं, जहाँ कल सब गवां सकते हैं। मुझे डर है कि हमने अपने भविष्य से खिलवाड़ किया है। बल्कि कुछ मुट्ठीभर लोगों ने हमारा भविष्य बेंच दिया है जिससे वे बेतहाशा धन कमा सकें। आपने हमसे कहा कि हमारे सपने आकाश की तरह हों किन्तु यही हमसे छीन लिया। आपने हमें झूठा आकाश दिखाया, झूठी आशा की डोर हमारे हाथ में थमायी। दुर्भाग्य यह है कि अधिकांश बच्चे ये जानते ही नहीं कि उनके सामने भविष्य कितना अधंकारमय है और जब तब वे ये बात समझ पायेंगे बहुत देर हो चुकी होगी। फिर भी मैं कहूँगी कि हम तुलनात्मक रूप से भाग्यशाली हैं, क्योंकि बहुत बच्चे ऐसे हैं जो पहले से ही इसका भयावह परिणाम भुगतने के लिए अभिशप्त हैं। उससे भी अधिक दुर्भाग्य यह कि कोई उनकी आवाज़ सुनने तक को तैयार नहीं है। क्या आप मुझे सुन रहे हैं? क्या मेरा माइक्रोफोन ऑन है? मैंने जब सन 2030 की बात की, जो अब से लगभग 10 साल 252 दिन और 10 घंटे दूर है, हम अपने नियंत्रण से परे विनाश की एक ऐसी अकल्पनीय किंतु अपरवर्तनीय श्रृखंला शुरू कर चुके होंगे जो हमारी सभ्यता की समाप्ति का उद्घोष होगी, और हमें इस बात का अंदाज़ा है। ऐसा होगा ही अगर उस समय तक विश्व और समाज में जारी सभी पर्यावरणीय विनाशकारी पहलुओं में स्थाई और अभूतपूर्व परिवर्तन नहीं हुआ, जिनमें CO2 उत्सर्जन में कम से कम 50% की कटौती भी सम्मिलित है, और वो भी तब जब कुछ ऐसे अविष्कार हों जो वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को साफ कर सकें, जो अभी तक अस्तित्व में नहीं आये हैं। साथ ही ज़्यादातर वैज्ञानिक गणनाओं में वायु प्रदूषण द्वारा लॉक इन वार्मिंग को उद्‌घाटित नहीं किया गया है। यदि आप पेरिस समझौते पर भी नज़र डालें तो इसमें क्लाइमेट जस्टिस और समानता के पहलू का कहीं स्पष्ट जिक्र नहीं है, जबकि वैश्विक स्तर पर इसकी अत्यंत आवश्यकता है।

हमें यह भी याद रखना है कि ये मात्र गणनाएं हैं। कोई निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि यह संकट 2030 में ही आयेगा। यह थोड़ा जल्दी भी आ सकता है। हालाँकि इसकी अवश्यंभाविता प्रश्न से परे है। आईपीसीसी के माध्यम से प्रायः सभी देशों के वैज्ञानिक-निष्कर्ष इस अनुमान का समर्थन करते प्रतीत होते हैं। दुनिया के प्रत्येक राष्ट्रीय वैज्ञानिक निकाय आईपीसीसी के निष्कर्षों का तर्कपूर्ण समर्थन करते हैं।

क्या आपने सुना मैंने जो अभी कहा? क्या मेरी अँग्रेज़ी ठीक है जो आप समझ सकें? क्या मेरा माइक्रोफोन स्विच ऑन है? ये मैं पूछ रही हूँ क्योंकि इन शब्दों को मैंनें कई बार दोहराया है, तब जब ट्रेनों, इलेक्ट्रिक कारों, बसों में

घंटों योरोप की यात्रा की। लेकिन मुझे नहीं लगता कि किसी ने इसको गंभीरता से लिया हो, क्योंकि कुछ भी बदला नहीं है। उत्सर्जन कम नहीं हुआ है, बल्कि बढ़ा ही है। जब मैं क्लाइमेट चेंज पर बात करने के लिए अलग-अलग देशों में घूम रही थी, अनेक विशिष्ट देशों ने जलवायु नीति पर लिखने के लिए मुझे मदद की पेशकश की। किंतु वास्तव में लिखना आवश्यक नहीं है। क्योंकि मूल समस्या जलवायु नीति का परिणाम नहीं है, बल्कि वायु गुणवत्ता पर 2001 का योरोपीय संघ का वह निर्देश है जिसने ब्रिटेन को अपने बेहद खराब कोयला बिजली संयत्रों को बंद करके कम खराब गैस बिजली संयत्रों में बदलने के लिए बाध्य किया। एक विनाशकारी ऊर्जा स्रोत से थोड़ा कम विनाशकारी स्रोत अपनाने से उत्सर्जन में कमी तो आयेगी, लेकिन जलवायु संकट को लेकर अत्यंत ख़तरनाक गलतफ़हमी यह है कि यह सिर्फ उत्सर्जन कम करने से दूर किया जा सकता है। निश्चित रूप से उत्सर्जन को कम करना आवश्यक है यदि हमें वार्मिंग के 1.5-2 डिग्री सेल्सियस से नीचे रहना है। लेकिन यह ऐसी प्रक्रिया है जो कुछ दशकों में ही पूर्णत: बंद हो जानी चाहिए। 'रोकें' से मेरा अभिप्राय शुद्ध 'शून्य' है, और उसके बाद नकारात्मक आकड़ा। यह वर्तमान राजनीति को नियमबद्ध करने की आवश्यकता दर्शाता है।

जबकि तथ्य यह है कि हम उत्सर्जन को रोकने की बात करें, कम करने की नहीं। किंतु हम यह नहीं कर रहे हैं। हमेशा की तरह जलवायु नहीं, व्यापार हमारी प्राथमिकता है। आप यूनाइटेड किंगडम के जीवाश्म ईंधन के नये दोहन के समर्थन को देखिए, आप यूके का शेल गैस फ्रैकिंग उद्योग को देखिए, इसके उत्तरी सागर के तेल और गैस क्षेत्रों का विस्तार देखिए, हवाई अड्डों के विस्तार के साथ-साथ एक नयी कोयला खदान योजना की अनुमति को देखिए। क्या ये आपको बेतुका नहीं लगता?

मुझे कोई संदेह नहीं है कि इतिहास में यह गैर-ज़िम्मेदाराना व्यवहार मानव जाति की सबसे बड़ी विफलताओं में से एक के रूप में याद किया जायेगा।

लोग मुझसे और मेरे जैसे अन्य लाखों स्कूल स्ट्राइकर्स से कहते हैं कि हमने जो प्राप्त किया है उसके लिए खुद पर गर्व होना चाहिए। लेकिन हमें इस उत्सर्जन को भी देखना चाहिए, शायद सिर्फ इसे। प्रत्येक बार जब हम कोई निर्णय लें तो हमें खुद से प्रश्न करना चाहिए कि यह निर्णय उस उत्सर्जन वक्र को कैसे प्रभावित करेगा। हमें अब अपनी सफलता और धन को आर्थिक विकास के ग्राफ में नहीं बल्कि उस वक्र में मापना चाहिए जो ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को दर्शाता है। अब सवाल सिर्फ यह नहीं होना चाहिए कि क्या

हमारे पास इसके लिए पर्याप्त धन है, बल्कि यह होना चाहिए कि क्या हमारे पास पर्याप्त कार्बन बजट है? यह हमारी नयी मुद्रा का केंद्र होना चाहिए। कई लोग कहते हैं कि हमारे पास जलवायु संकट का कोई समाधान नहीं है और वे सही हैं। आप उस सबसे बड़े संकट का समाधान कैसे कर सकते हैं जिसका मानवता ने कभी सामना किया है? आप युद्ध को 'हल' कैसे करते हैं? आप पहली बार चाँद पर जाने का समाधान कैसै करते हैं? आप नये अविष्कारों का हल कैसै करते हैं?

जलवायु संकट सबसे आसान मुद्दा भी है और कठिन भी जिसका हमने कभी सामना किया है। आसान इसलिए क्योंकि हमें पता है कि हमें क्या करना चाहिए। हमें पता है कि हमें ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को रोकना होगा। सबसे कठिन इसलिए क्योंकि हमारा संपूर्ण अर्थशास्त्र अभी भी जीवाश्म ईंधन जलाने पर निर्भर है और ऐसा करके स्थाई आर्थिक विकास के लिए पारिस्थितिकी के संपूर्ण तंत्र को नष्ट कर रहा है। जब हम स्कूली बच्चे जलवायु के लिए संघर्ष कर रहे हैं, आप हमसे पूछते हैं,"तो हम वास्तव में इसे कैसे हल कर सकते हैं?" हम कहते हैं: "कोई भी निश्चित रूप से नहीं कह सकता है। किन्तु हमें जीवाश्म ईंधन जलाना बंद करना होगा और प्रकृति को पुनर्स्थापित होने का अवसर देना होगा। लेकिन बस इतनी सी बात हम अभी तक समझ नहीं सके हैं। फिर आप कहते हैं:"यह कोई जवाब नहीं है।"

इसलिए हम कहते हैं: "हमें पहले संकट को संकट के रूप में स्वीकार करना होगा, फिर इस पर काम करना शुरू करना होगा। भले अभी हमारे पास सभी समाधान न हों।" आप कहते हैं, "अभी यह पूर्ण उत्तर नहीं है।" जब हम प्रकृति को पुनर्जीवित करने या सर्कुलर अर्थव्यवस्था स्थापित करने की आवश्यकता पर बात करना आरंभ करते हैं, तब आप समझ नहीं पाते कि हम क्या कहना चाह रहे हैं। हम जानते हैं कि सभी आवश्यक समाधान हमें ज्ञात नहीं हैं, इसीलिए हमें विज्ञान के पीछे एकजुट होकर एकसाथ समाधान तलाशने चाहिए। लेकिन आप यह सुनना नहीं चाहते, क्योंकि ये जवाब एक ऐसे संकट को हल करने के लिए हैं जिसे आपमें से अधिकांश लोग समझ भी नहीं पाते हैं। या यूँ कहूँ कि समझना नहीं चाहते।

आप विज्ञान की बात नहीं सुनते हैं क्योंकि आपकी रुचि मात्र उन समाधानों में है जो आपको हमेशा की तरह आगे बढ़ाने में सक्षमता प्रदान करते हैं। किंतु वो समाधान, वो जवाब अब प्रासंगिक ही नहीं क्योंकि आपने समय पर कार्यवाही नहीं की। जलवायु को नष्ट होने से बचाने के लिए कैथेड्रल सोच की आवश्यकता होगी। यदि हम नहीं जानते कि छत कैसे बनायी जाती है, तो

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

कम से कम हम नींव तो रख दें। कभी-कभी हमें बस एक राह तलाशनी होती है। जिस क्षण हम ठान लेते हैं, हम कुछ भी कर सकते हैं। मैं विश्वास से कहती हूँ जिस क्षण हम इसे आपातकाल मानकर काम करना शुरू कर देंगे, हम जलवायु और पारिस्थितिक तबाही से बच सकते हैं। हम अब भी यह कर सकते हैं, लेकिन यह अवसर बहुत समय तक नहीं रहेगा। शुरुआत आज से ही करनी होगी। हम और बहाने नहीं बना सकते। हम बच्चे जब अपने बचपन और अपनी शिक्षा का त्याग कर रहे हैं, तो ये बताने के लिए नहीं कि आपके द्वारा निर्मित समाज में राजनीतिक संभावनाएं क्या हैं। मैं आपको बताऊँ कि हम आपके साथ सेल्फी लेने के लिए सड़कों पर नहीं उतरे हैं। आप हमें बतायें कि क्या आपकी नज़रों में हमारे कार्य की कुछ कीमत है? हम बच्चे ऐसा कर रहे हैं क्योंकि हम चाहते हैं कि आप बड़े जग जायें। आप अपने मतभेद एक तरफ रख दें और इस संकट से उबरने की कोशिश शुरू करें। हम बच्चे ये सब इसलिए कर रहे हैं क्योंकि हम अपनी उम्मीदें और सपने वापस चाहते हैं।

मैं आशा करती हूँ कि मेरा माइक्रोफोन चल रहा है और आप मुझे सुन सकते हैं।

प्रयाग की साहित्यिक पत्रकारिता

डॉ. बृजेन्द्र अग्निहोत्री

आईएसबीएन : 978-93-87831-60-1

संस्करण : 2019, मूल्य : 250/-

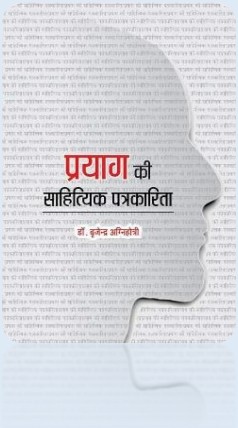

कविता

एल. सी. कुमार
सहायक महाप्रबंधक, एनएमडीसी, दोणिमलै
बेल्लारी, कर्नाटक

युद्ध

नहीं चाहिए युद्ध, कहते हैं गौतम बुद्ध
किसने इसे पुकारा है जमीन पर उतारा है
कितने हुए बेघर और कितनों को बेमौत मारा हैं
जीवन को रखो निर्मल व शुद्ध
नहीं चाहिए युद्ध, कहते हैं गौतम बुद्ध

महत्वकांक्षी आएं मेरी भी है शायद तुम्हारी भी हैं
करेंगे पूरी मिल बैठकर झांठ कर बांट कर
मिटायेंगे दूरियां दिलों की आपस में बैठकर
ना करेंगे तबाही अपने स्वार्थ और स्वाभिमान के लिए
करेंगे काम देश के निर्माण के लिए

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

आम जनता के समान आयुष्मान के लिए
करो ऐसे काम और बन जाओ प्रबुद्ध
नहीं चाहिए युद्ध कहते हैं गौतम बुद्ध
लगता है समय चीजों को बनाने में
फसलों को उगाने व पकाने में
नौनिहालों को नौजवान बनाने में
और नौजवानों को देश प्रेमी बनाने में
बस क्षणिक आत्म उल्लास के लिए
कुछ ही समय लगता है सब को मिटाने में
करके तपस्या जहान बनाया है सभी कुछ इस में समाया है
ना करेंगे नष्ट इसको कर ले मन को शुद्ध
नहीं चाहिए युद्ध कहते हैं गौतम बुद्ध

अगर हो गया युद्ध कुछ नहीं बच पाएगा
सब हो जाएगा नष्टअंधकार छा जाएगा
बिछड़ जाएगा मां का लाल और शहीद हो जाएगा
कोई पति अपनी पत्नी से ना मिल पाएगा
क्या होगा उन मासूमों का जिनका मूल अधिकार छिन जाएगा
बिना किसी गलती के उन सब का भविष्य मिट जाएगा
कल्पना करके रोता है मन दिल होता है छू वध
नहीं चाहिए युद्ध कहते हैं गौतम बुद्ध

उजड़ी चीजों को बस आने में समय लगता है
गिरी इमारतों को बनाने में समय लगता है
बिखरे हुए गांव को बस आने में समय लगता है
नहीं मिलता इंसान का जीवन बाजार में
इंसान का जीवन बनाने में समय लगता है
चलो मिल बैठे खोल दे दुश्मनी की गांठे
मिलकर बनाएंगे नई दुनिया करके आत्मग्लानि को शुद्ध
नहीं चाहिए युद्ध कहते हैं गौतम बुद्ध!

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

कविता

संजय कुमार सिंह की कविताएं

परजन्या!

परजन्या
सभ्यता के इन खण्डहरों में
अब कहीं नहीं बहती
वह एक नदी थी सदानीरा
जो सूख गयी,
हो गयी स्मृतिशेष!
क्या एक दिन
इसी तरह
गंगा भी हो जाएगी
निःशेष!

पानी

इस विचित्र समय को जाने बगैर
कहती थी सुलोचना
जब कहीं नहीं बचेगा,
तब भी आदमी की आँख में बचेगा पानी!
अब जब सूख रही
हर तरफ हया की गंगा
और निर्लज्ज हो रही आँखें
क्या तब भी तुम यही कहोगी
सुलोचना ?

उन्मन्या से प्रेम!

तुम्हारे साथ चलते हुए
मेरी साँस ही फूल गयी उन्मन्या
अगर यही है तुम्हारा प्यार
तो फिर मैं नहीं चल पाऊँगा।
कभी जिन्दगी को
उसकी स्वाभाविक रफ्तार से भी
चलने दो उन्मन्या!

लापता

मित्र सुमंत!
इन दिनों मैं
किसी से मिलकर भी
नहीं मिल पाता।
तुम्हें दुख है
कि मैं उन बातों
और मुलाकातों भी भूल गया,
जिन्हें आसानी से कोई नहीं भूलता
अब मैं तुम्हें कैसे बताऊँ,
इस भीड़
और भाग–दौड़ भरी जिन्दगी में,
बरसों हुए खुद से मिले हुएद्य
क्या तुम अब भी,
खुद से मिल पाते हो,
मित्र सुमंत?

आभास

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

मित्र आभास!
क्या खोज रहे हो इस आभासी दुनिया में ?
यहाँ कुछ नहीं मिलेगा बेगानेपन के सिवा
बचपन का वह पाठ याद है–
रानी, मदन ... अमर घर चल ?
चलो लौट चलें!
पर क्या
अब यह मुमकिन है आभास?

सभ्यता

कंक्रीट के जंगल में
तुम्हें खोजते हुए
हुगली में चाँद डूब गया
और उम्मीद की आँखों में
खून उतर आया...
क्या तुम इस जंगल में
अब भी जिंदा हो सुपर्णा ?
किसी का भी दम एक दिन
घुट जाएगा इस जंगल मे!

उम्मीद

कितने नादान थे तुम
कहते थे सब अच्छा होगा
इस रेत पथ में कहीं कोई नदी होगी
चलते–चलते मेरे पैर छिल गए
और होंठ जल गए...
अब आत्मा तक फैली–पसरी
इस प्यास और तरस को
किसे बताएँ
सुकण्ठा ?

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

संजय कुमार सिंह

प्राचार्य, पूर्णिया महिला कॉलेज,
पूर्णिया–854301
मो. 9431867283

अग्नि–पथ

हाँ याद है
तुमने कहा था
जब भी आग और धुआँ से बचना हो
तो उधर से रास्ता बदल लेना।
अब हर तरफ आग और धुआँ है
तो बोलो कोई किधर जाएगा सुदेशना?

चिंता

तुम फिर उदास हो गयी
दुनिया एक बाजार है
जब आँखों का पानी बेच दिया
तो वे हर चीज बेचेंगे इस बाजार में
माँ की कोख से लेकर
धरती की हरियाली तक
तुम क्या–क्या बचाओगी
रक्षिता ?

दर्द

सात हाथ धरती धंस गयी
आसमान का रंग धूसर हो गया
और बहती हुई नदी का पानी सूख गया
बताओगे उस घर में
ऐसा क्या हुआ
सृजन्या ?

नवीन माथुर पंचोली की तीन ग़ज़लें

1

मन में जो पलता रहता है।
चेहरे पर चलता रहता है।

मन को जो भी रास न आया,
आँखों को खलता रहता है।

मिट्टी से रिश्ता है उसका,
अक्सर जो फलता रहता है।

चाँद, सितारे रात सजायें,
सूरज जब ढलता रहता है।

हो किस्मत का साथ नहीं तो,
मौका हर टलता रहता है।

हाल–वक़्त पर चूका फिर वो,
हाथों को मलता रहता है।

2

जितने हैं समझाने वाले।
थोड़े हैं अपनाने वाले।

सुनते हैं बस कानों तक,
बातों को झुठलाने वाले।

कैसे मंजिल तक जायेंगे,
रस्ते भर सुस्ताने वाले।

मिलते हैं अपने मतलब से,
कितने आज जमाने वाले।

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

सा रे गा मा पर अटके हैं,
ऊँचे सुर में गाने वाले।

औरों का फन क्या समझेंगे,
अपने गाल बजाने वाले।

नवीन माथुर पंचोली
अमझेरा, धार, म.प्र.
मो. 9893119724

3

ये दिलदारी पहले से है।
फन से यारी पहले से है।

आग लगाने वाली तन में,
ये चिंगारी पहले से है।

हम—आपस के व्यवहारों में,
दुनियादारी पहले से है।

आज रही मजबूरी थोड़ी,
कुछ लाचारी पहले से है।

दिखती है जो सबमें हमको,
वो अय्यारी पहले से है।

वो ही है सबसे आखिर में,
जिसकी बारी पहले से है।

बोझ किसी के अहसानों का,
सिर पर भारी पहले से है।

मंजिल तक तो इन राहों की,
सब दुश्वारी पहले से है।

आज निभाई जितनी हमनें,
जिम्मेदारी पहले से है।

ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

ग़ज़ल

समीर द्विवेदी 'नितांत'
कन्नौज, उ. प्र.
sameerdwivedi70@gmail.com

हर एक शख्स ही तनहा दिखाई देता है
कभी डरा कभी सहमा दिखाई देता है।

यही खयाल ही महका दिखाई देता है
हर एक शख्स ही अपना दिखाई देता है।

बहुत दिनों से जो रस्ता दिखा रहा था मुझे..
वो आज राह से भटका दिखाई देता है ।

जरूर आज कहीं आसपास ही हो तुम..
हर एक गुंचा चटखता दिखाई देता है ।

बिछुड़ के तुझसे मुहब्बत हुई हर एक शै से..
हर एक सू तेरा चेहरा दिखाई देता है ।

बदल गए हैं क्या हालात चार दिन के लिए..
अब इस जमाने में क्या क्या दिखाई देता है।

जदीद दौर का हर शख्स अपनी मस्ती में..
कदम कदम पे ही बहका दिखाई देता है।

तेरी तलाश में हमदम मुझे बजूद अपना..
हर एक सिम्त बिखरता दिखाई देता है।

नजर से दूर है लेकिन नितान्त जाने क्यों..
वो मुझको साथ ही चलता दिखाई देता है।

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

होंगे हजार गलतियां छोड़कर चले जाओ
प्यार की वो गलियां... छोड़कर चले जाओ।

आह भी नहीं निकलेगी कि दिल क्यों टूटा,
यादों के तमाम गुलिस्तां छोड़कर चले जाओ।

अक्सर कहा करते थे कि पत्थर दिल होते हैं,
वो भाला, चाकू, छुरियां... तोड़कर चले जाओ।

कलियां संभल भी न पाई सुनामी बहा ले गया,
हो सके तो वो पौधे कलियां रोपकर चले जाओ।

मैं तो कटी पतंग सी आसमां से में भटकती रहूंगी,
तुम कभी न टूटने वाली रिश्ता जोड़कर चले जाओ।

ये सुंदर मन तन यूं ही सांझ की दुल्हन बनी है,
ख़्वाबों में सही घूंघट का पट खोलकर चले जाओ।

होंगे हजार गलतियां छोड़कर चले जाओ
प्यार की वो गलियां... छोड़कर चले जाओ।।

मनोज शाह 'मानस'
डी–27, सुदर्शन पार्क,
नई दिल्ली–110015
मो. 7982510985

ग़ज़ल

विज्ञान व्रत
एन–38 सैक्टर 25, नोएडा 201301
मो . 09810224571

1

आज तक जो कुछ कहा
क्या कभी खुद भी सुना।

जन्म से मुझमें रहा
मैं नहीं तो कौन था!

मैं फसाना क्यों हुआ
काश तू ये जानता !

जिन्दगी–भर का सिला
सिर्फ तू हासिल रहा !

वो जो नजरों में रहा
काश मुझको दीखता!

मैं किसी का क्यों हुआ
ये गिला है आपका!

था जमाना साथ में
साथ में जब तू न था!

2

क्या–क्या सोचा था न हुआ
मिलकर भी मिलना न हुआ।

वो मेरा चेहरा न हुआ
उससे ये रिश्ता न हुआ।

बरसों से जो मुझमें है
क्यों मेरा अपना न हुआ!

बोलूँ उसकी भाषा क्यों
मैं उसका तोता न हुआ।

मैंने सिर्फ पढ़ा है वो
खत में जो लिक्खा न हुआ।

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)

 ISSN : 2319-2178 (P) 2582-6603 (O)